षोडशोऽध्यायः

ऋषिः—परमेष्ठी वा कुत्सः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—आर्षीगायत्री। **स्वरः**—षड्जः॥

मन्यु-इषु-बाहू

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः ॥१॥

१. हे **रुद्र**=(रुत् ज्ञानं राति ददाति) ज्ञान देनेवाले और ज्ञान देकर (रुत्=दुःखं द्रावयति) सब दुःखों को दूर करनेवाले प्रभो! **ते मन्यवे**=आपसे दिये जानेवाले ज्ञान के लिए **नमः**=हम नतमस्तक होते हैं। (क) विनीत को ही ज्ञान की प्राप्ति होती है और (ख) ज्ञान प्राप्त करके ही मनुष्य सब कष्टों से ऊपर उठता है। कष्टमात्र के लिए अविद्या, अज्ञान ही उर्वरा भूमि है। 'अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषाम्' (योगदर्शन)। २. **उत उ**=और अब निश्चय से **ते इषवे**=(इष् प्रेरणे) आपसे दी गई प्रेरणा का **नमः**=हम आदर करते हैं। आपसे वेदज्ञान में दी गई प्रेरणाएँ हमारे लिए कितनी उपयोगी हैं। अथर्व के प्रारम्भ में कहा गया 'वाचस्पति' शब्द 'वाणी व जिह्वा का पति बनना, इन्हें काबू में रखना' हमारे अनन्त कल्याण का कारण बन जाता है। जिह्वा के रस में न फँसकर परिमित भोजन करते हुए हम सब रोगों से ऊपर उठ जाते हैं और इस जिह्वा को वश में करके नपे-तुले परिमित शब्द बोलते हुए हम पारस्परिक कलहों में नहीं फँसते। आपकी एक-एक प्रेरणा हमारा अनन्त उपकार करनेवाली है। ३. **उत**=और **ते बाहुभ्याम्**=(बाह प्रयत्ने) आपके इन दोनों प्रयत्नों के लिए हम **नमः**=नतमस्तक होते हैं। आपने हमें 'ऋग्वेद' के द्वारा विज्ञान दिया तो अथर्व के द्वारा ज्ञान। विज्ञान ने हमें अभ्युदय के साधन के योग्य बनाया तो ज्ञान से निःश्रेयस का पथिक। इस प्रकार हमारे जीवनों में आपने 'प्रेय व श्रेय' दोनों का समन्वय कर दिया। प्रकृति से हमने ऐहलौकिक उन्नति का साधन किया तो आत्मतत्त्व से परलोक का। इस प्रकार आपकी कृपा से हमारे जीवन में धर्म का उदय हुआ **'यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः'**। धर्म अभ्युदय व निःश्रेयस दोनों को ही सिद्ध करता है। धर्म के शिखर पर पहुँचनेवाला यह सचमुच 'परमेष्ठी' प्रस्तुत मन्त्र का ऋषि बनता है।

भावार्थ—प्रभु से दिये जानेवाले ज्ञान के लिए, उस ज्ञान द्वारा दी जानेवाली प्रेरणाओं, और उन प्रेरणाओं से सिद्ध होनेवाले अभ्युदय व निःश्रेयस के लिए हम नतमस्तक होते हैं।

ऋषिः—परमेष्ठी वा कुत्सः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—स्वराडार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

गिरिशन्त

या ते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभि चाकशीहि ॥२॥

१. गत मन्त्र के ज्ञान का ही उल्लेख करते हुए कहते हैं कि हे **रुद्र**=ज्ञान देकर दुःखों का द्रावण करनेवाले प्रभो! **या**=जो **ते**=आपकी **तनूः**=सत्योपेदेशनीति (द०)=सत्योपदेश का मार्ग है वह (क) **शिवा**=अभ्युदय व निःश्रेयस के साधन से सचमुच हमारा कल्याण

करनेवाला है। (ख) **अघोरा**=हमारे जीवनों को विषयशून्य व सौम्य बनानेवाला है। (ग) यह सत्योपदेशनीति **अपापकाशिनी**=अपापों को—सत्यधर्मों को ही प्रकाशित करनेवाली है। आपके वेदज्ञान में सत्यधर्म का ही उपदेश है। २. हे **गिरिशन्त**=(यो गिरिणा सत्योपदेशेन शं सुखं तनोति—द०) सत्योपदेश की वाणी से सुख व शान्ति का विस्तार करनेवाले प्रभो! (गिरि वाचि स्थितः शं तनोति—म०) आप इस वाणी के द्वारा परिमित भोजन का उपदेश देते हुए (आज्यं तौलस्य प्राशान=घी को तोलकर खाओ, नपा-तुला खाओ) हमें नीरोग व सुखी करते हैं तथा परिमित मधुर बोलने का उपदेश देते हुए (वाचं स्वदतु=स्वादवाली, मधुरवाणी ही बोलो) हमारे जीवनों को कलहों से ऊपर उठाकर शान्त करते हैं। आप **तया तन्वा**=उस सत्योपदेश नीति से जो **नः**=हमारे लिए **शन्तमया**=अधिक-से-अधिक शान्ति का विस्तार करनेवाली है, **अभिचाकशीहि**=हमें देखिए, हमारी रक्षा का ध्यान कीजिए (चाकशीतिः पश्यतिकर्मा—नि० ३।११ देखना=to look after ध्यान करना) ३. हे प्रभो! आप **गिरिशन्त**='गिरीश' वेदवाणी में स्थित होनेवाले तथा 'अन्त' (अमति गच्छति जानाति) सर्वज्ञ हैं। आप सब सत्यविद्याओं की आश्रयभूत, अत्यन्त सुखकारिणी इस वेदवाणी से हमारा पालन कीजिए।

भावार्थ—उस प्रभु का दिया हुआ ज्ञान 'शिव, अघोर व पुण्य का प्रकाशक' है और शन्तम=अधिक-से-अधिक शान्ति देनेवाला है। इस ज्ञान से ही प्रभु हमारा पालन करते हैं।

ऋषिः—परमेष्ठी वा कुत्सः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—विराडार्ष्युनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

अस्तवे (Broadcasting)

यामिषुं गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे।
शिवां गिरित्र तां कुरु मा हिंसीः पुरुषं जगत्॥३॥

१. हे **गिरिशन्त**=वेदवाणी में स्थित होकर इस ज्ञानवाणी के द्वारा शान्ति का विस्तार करनेवाले प्रभो! **याम् इषुम्**=जिस प्रेरणा को **अस्तवे**=चारों ओर—सम्पूर्ण आकाशदेश में फेंकने (broadcast) के लिए **हस्ते बिभर्षि**=आप हाथ में धारण करते हैं। 'हाथ में धारण करना' यह प्रयोग 'ज्ञान के उपस्थित' होने का सूचक है (on the tip of fingers=सारे पाठ का अंगुलियों के अग्रभाग में उपस्थित होना) प्रभु तो ज्ञानमय हैं। इस ज्ञान के द्वारा वे निरन्तर प्रेरणा प्राप्त करा रहे हैं। उस प्रेरणा को मानो वे सम्पूर्ण आकाश में फैला रहे हैं। जैसे एक ब्रॉडकास्टिङ्ग स्टेशन से किसी समाचार को सारे आकाश में फेंका जाता है, उसी प्रकार वे प्रभु सम्पूर्ण ज्ञान की प्रेरणा को हाथ में धारण किये हुए चारों ओर फैला रहे हैं। २. यदि उस प्रेरणा को हम सुनते हैं तो हमारा कल्याण-ही-कल्याण होता है। हे **गिरित्र**=इस वेदवाणी में स्थित होकर हमारा त्राण करनेवाले प्रभो! **ताम्**=उस ज्ञान-प्रेरणा को आप हमारे लिए **शिवाम्**=कल्याणकारिणी **कुरु**=कीजिए। ३. आप उस प्रेरणा के द्वारा **जगत् पुरुषम्**=क्रियाशील पुरुष को **मा हिंसीः**=मत हिंसित होने दीजिए। जो उस प्रेरणा के अनुसार गति करता है, उसकी हिंसा नहीं होती। हे प्रभो! आप उसे और अधिक क्रियान्वित करने के लिए भी प्रेरणा दीजिए तभी तो हम नाश से अपनी रक्षा कर सकेंगे।

भावार्थ—हे प्रभो! आप वेदवाणी के ब्रॉडकास्टिङ्ग स्टेशन हैं, मैं उसका ग्रहण करनेवाला रेडियो सेट बनूँ। उस प्रेरणा को ग्रहण करके अपना कल्याण सिद्ध कर सकूँ।

ऋषिः—परमेष्ठी। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

अयक्ष्मं+सुमना

शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि।
यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳसुमनाऽअसत्॥४॥

१. हे **गिरिश**=वेदवाणी में निवास करनेवाले प्रभो! सारी वाणियाँ आपका ही वर्णन कर रही हैं 'सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति'। हम **शिवेन वचसा**=इस कल्याणकारिणी वेदवाणी से **त्वा अच्छ**=(अच्छ अभेदाप्तुम् इति शाकपूणिः—नि० ५।२८) आपको प्राप्त करने के लिए **वदामसि**=प्रार्थना करते हैं। अथवा इस वेदवाणी के अनुसार अपने जीवन को बनाते हुए, वेदवाणी को जीवन से कहते हुए, आपको प्राप्त करने के लिए यत्नशील होते हैं। आपको प्राप्त करने का उपाय यही है कि हम वेदवाणी के अनुसार अपने जीवन को बनाएँ। २. **यथा**=जिससे **नः**=हमारा **सर्वं इत् जगत्**=सारा ही जगत्—हमारे सब क्रियाशील व्यक्ति **अयक्ष्मम्**=रोग से रहित तथा **सुमना**=उत्तम मनवाले=प्रसन्नचित्त **असत्**=हों। वेदवाणी के हमारे जीवनों पर दो परिणाम हैं। यह हमारे शरीरों को व्याधि-शून्य बनाती है (अयक्ष्मम्) तथा मन की आधियों को हरती है (सुमनाः)।

भावार्थ—हम अपने जीवन को वेदवाणी के अनुसार बनाते हुए प्रभु को प्राप्त करनेवाले बनें। हमारे शरीर व्याधियों से शून्य हों और मन आधियों से।

ऋषिः—बृहस्पतिः। **देवता**—एकरुद्रः। **छन्दः**—भुरिगार्षीबृहती। **स्वरः**—मध्यमः॥

प्रथम दैव्य भिषक्

अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक्।
अहीँश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परा सुव॥५॥

१. गत मन्त्र में आधि-व्याधियों के दूरीकरण का प्रसङ्ग था। इन आधि-व्याधियों को दूर करनेवाला **प्रथमः**=सबसे पहला **दैव्यः**=मन में दिव्य गुणों को उत्पन्न करनेवाला तथा **भिषक्**=शरीर के रोगों का प्रतीकार करनेवाला वह प्रभु ही **अधिवक्ता**=(अधि=उपरिभाव व ऐश्वर्य का वाचक है) सबसे श्रेष्ठ उपदेष्टा है, वह गुरुओं का भी गुरु है 'सर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्' (योगदर्शन)। वह पूर्ण ज्ञानी होने से ऐश्वर्य के साथ, पूर्ण प्रभुत्व (full mastery) के साथ बोलनेवाला है। उसके प्रतिपादन में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं है। २. वह प्रभु **अध्यवोचत्**=हमें आधिक्येन उपदेश करे, हमें खूब ही प्रेरणा प्राप्त कराता रहे। ३. हे प्रभो! आप हमारे मनों से **सर्वान् अहीन् च**=सब कुटिल वृत्तियों को (साँप कुटिलता का प्रतीक है) अथवा (आहन्ति) सब हिंसावृत्तियों को **जम्भयन्**=नष्ट करते हुए **सर्वाः च यातुधान्यः**=एक-दूसरे से बढ़कर पीड़ा (यातु) का आधान करनेवाली (धानी) सब बीमारियों को **अधराचीः** (अधः अञ्चति)=अधोगमनशील करके **परा सुव**=हमसे दूर कर दीजिए। ४. यहाँ 'अधराचीः' शब्द के महत्त्व को समझना चाहिए। सब रोग शरीर में मल-सञ्चित हो जाने से होते हैं। विरेचन के द्वारा इन्हें शरीर से पृथक् करना चाहिए। मल गया, रोग गया। एवं, विरेचन रोग को दूर भगाने में अत्यन्त सहायक है। ४. मलों के दूरीकरण से शरीर को स्वस्थ बनाने के लिए मनों से कुटिलवृत्ति व हिंसा की वृत्ति को दूर करना है। यह स्वस्थ मन व स्वस्थ शरीरवाला व्यक्ति ही 'बृहस्पति' है, ऊर्ध्वा दिक्

का अधिपति है, यही तो सर्वोच्च स्थिति है।

भावार्थ—हे प्रभो! आप ही अधिवक्ता हैं, प्रथम दैव्य भिषक् हैं। आप हमारे मनों से कुटिलता व हिंसा को भगाकर स्वस्थ कीजिए तथा रोगों को दूर करके शरीर की पीड़ा को दूर कीजिए।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—निचृदार्षीपङ्क्तिः। **स्वरः**—पञ्चमः॥

राजा ताम्रः अरुणः

असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः।
ये चैनꣳरुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳहेडऽईमहे ॥६॥

१. गत मन्त्र की प्रार्थना थी कि हमारी सब 'आधि-व्याधि' दूर हो जाएँ। इन्हें दूर भगाने के लिए ही राजा एक राष्ट्र की व्यवस्था करता है। इस राज्य का मुखिया या राजा **असौ**=वह होता है **यः**=जो (क) **ताम्रः** =(ताम्रवत् कठिनाङ्गः—द०) ताम्र की तरह दृढ़ शरीरवाला होता है। अथवा 'तम्यते' (to wish, to desire) सब प्रजाओं से चाहा जाता है, अर्थात् अपने प्रजापालकत्वादि उत्तम गुणों के कारण जो सारी प्रजा का प्रिय है। यह अपने कान्त गुणों से सब प्रजा के लिए वैसे ही अभिगम्य बनता है, जैसे रत्नों के कारण समुद्र। (ख) **अरुणः**=(अग्निरिव तीव्रतेजाः—द०) जो अग्नि के समान तीव्र तेजवाला है। 'अरुणः आरोचनः' (नि० ५।२०) जो अपने तेज से सर्वतो देदीप्यमान है। उस तेज के कारण शत्रुओं से जिसका धर्षण नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार जैसेकि मगरमच्छों के कारण समुद्र का। (ग) वह **बभ्रुः**=प्रजा का खूब ही पालन व पोषण करनेवाला है। (घ) **सुमङ्गलः**= सदा उत्तम कल्याण को सिद्ध करनेवाला है। २. इस राजा ने राष्ट्ररक्षा के लिए कितने ही अध्यक्षों को नियत किया है। इनका कार्य (रुत्-र) प्रजा को ज्ञान देना है, प्रजा को राज्य के नियमों से भली-भाँति अवगत कराना है तथा (रुत्-द्रु) प्रजाओं के दुःखों के द्रावण के लिए (रोदयति) शत्रुओं को रुलाना है और नियम-भङ्ग करके औरों की असुविधा का कारण बननेवालों को भी पीड़ित करना है। एवं, ये अध्यक्ष 'रुद्र' हैं। ३. **ये च**=और जो **एनं अभिताः** =इस राजा के चारों ओर **रुद्राः**=वे अधिकारी लोग **दिक्षु श्रिताः**=भिन्न-भिन्न दिशाओं में नियुक्त हुए-हुए हैं, **सहस्रशः**=जोकि हज़ारों की संख्या में हैं, **एषाम्**=इनके **हेडः**=क्रोध को **अव ईमहे**=(अवनयामः) हम अपने से दूर करते हैं। राज्य के नियमों के पालन का ध्यान करते हुए हम इनके क्रोध का पात्र नहीं बनते। ४. इस प्रकार उत्तम व्यवस्था करनेवाला राजा ही प्रस्तुत मन्त्र का ऋषि 'प्रजापति, अर्थात् प्रजा का सच्चा रक्षक होता है'।

भावार्थ—राजा 'ताम्र, अरुण, बभ्रु व सुमङ्गल' हो। अध्यक्ष 'रुद्र' हों। प्रजा नियम-पालन करती हुई इनके क्रोध का पात्र न बने।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—विराडार्षीपङ्क्तिः। **स्वरः**—पञ्चमः॥

नीलग्रीवो विलोहित

असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः।
उतैनं गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७॥

१. गत मन्त्र के राजा का ही वर्णन करते हुए कहते हैं कि **असौ**=वह **यः**=जो

अवसर्पति=अपने उच्च सिंहासन से नीचे (अव) आता है, आसन पर ही नहीं जमा बैठा रहता, अपितु (अव=away) राष्ट्र में नियत किये हुए अध्यक्षों के कार्यों को देखने के लिए दूर-दूर तक गति करनेवाला होता है। इसके इस निरीक्षण-कार्य के कारण ही अध्यक्ष प्रमत्त व रिश्वत लेनेवाले नहीं होते। २. **नीलग्रीवः**=**कल्माषग्रीवः**=विविध विद्याओं से सुभूषित कण्ठवाला यह राजा है। 'शुद्धकण्ठस्वराय' (द० १६।८) बड़े शुद्ध कण्ठ स्वर से यह युक्त है। इसकी वाणी स्पष्ट व मधुर है। यह अपने शासनों को बड़ी स्पष्टता से देता है। ३. **विलोहितः**=(विविधैः शुद्धगुणकर्मस्वभावै रोहितो वृद्धः-द०) विविध शुद्ध गुण-कर्म व स्वभावों से यह खूब बढ़ा हुआ व उन्नत है। अथवा (विशिष्टं लोहितं यस्य) विशिष्ट रुधिरवाला है। शुद्ध क्षत्रियवंश में उत्पन्न हुआ है। ४. ऐसा होता हुआ भी यह प्रजाओं के लिए अनभिगम्य नहीं और तो और **एनं गोपाः उत**=इसको तो ग्वाले भी **अदृश्रन्**=देख पाते हैं—**उदहार्यः**=पानी ढोनेवाली कहारिन की भी **अदृश्रन्**=इस तक पहुँच हो सकती हैं। वे भी अपनी शिकायत को इस तक पहुँचाने के लिए इससे मिल सकती हैं। यह राजा राष्ट्र में छोटे-से-छोटे व्यक्ति की भी शिकायत सुनता है। ५. सुनकर अनसुना नहीं कर देता अपितु **दृष्टः सः**=देखा हुआ वह राजा जिसको मिलकर हमने अपनी दुःख की गाथा सुनाई है **नः मृडयाति**=हमारी शिकायतों को दूर करने की व्यवस्था करके हमें सुखी बनाता है।

भावार्थ—राजा प्रजा में विचरता है, खूब ज्ञानी व मधुर स्वरवाला है, खूब उन्नत व विशिष्ट रुधिरवाला तथा तेजस्वी है। छोटे-से-छोटे व्यक्ति के लिए अभिगम्य है। वह सबकी शिकायतों को दूर करके उन्हें सुखी करता है।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

सहस्राक्षा मीढ्वान्

नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे।
अथो येऽअस्य सत्वानोऽहं तेभ्योऽकरं नमः॥८॥

१. इस **नीलग्रीवाय**=विविध विद्याओं से सुभूषित कण्ठवाले अथवा शुद्ध कण्ठ स्वरवाले **सहस्राक्षाय**=(चारैः चक्षुः) सहस्रों गुप्तचररूपी आँखोंवाले **मीढुषे**=सुखों का सेचन करनेवाले राजा के लिए **नमः अस्तु** =आदर हो। २. राजा ज्ञानी व मधुरभाषी हो। आधिपत्य का मद उसे कठोरभाषी न कर दे। वह राष्ट्र में स्वयं घूमेगा तो सही, फिर भी प्रजा की स्थिति के ठीक परिज्ञान के लिए उसे सहस्रों गुप्तचरों को नियत करना होगा। **'चारैः पश्यन्ति राजानः'** राजा लोग गुप्तचरों के द्वारा ही आँखोंवाले होते हैं। गुप्तचरों से ठीक स्थिति को जानकर उचित व्यवस्था करते हुए ये प्रजा के जीवन को सुखी बनाएँ। ३. **अथ उ**=और अब **ये**=जो **अस्य**=इस राजा के **सत्वानः**=प्राणी हैं, भृत्य हैं। बड़े अध्यक्ष 'रुद्र' हैं तो ये छोटे कर्मचारी 'सत्वानः' कहे गये हैं, 'सीदति राष्ट्रं येषु'=इन्हीं में राष्ट्र निषण्ण होता है, ये ही राष्ट्र की उत्तम स्थिति करने में सबसे अधिक सहायक हैं। **अहम्**=मैं **तेभ्यः**=इन सिपाही आदि छोटे कर्मचारियों का भी **नमः अकरम्**=उचित आदर करता हूँ। हमें चौराहे पर खड़े पुलिसमैन का भी आदर करना चाहिए। उसके दिये गये संकेत को हम न मानेंगे तो अवश्य दुर्घटना कराके अपने को घायल कर लेंगे, अतः हमें जैसे 'रुद्रों' का आदर करना है, वैसे ही इन 'सत्वानः' का भी आदर करना चाहिए।

भावार्थ—राजा चार-चक्षु होता है। प्रजा की स्थिति को उनके द्वारा जानकर वह

उचित व्यवस्था से सुखों का वर्षक होता है। व्यवस्था के लिए नियत उसके कर्मचारियों का भी हमें उचित आदर करना चाहिए।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—भुरिगार्ष्युष्णिक्। **स्वरः**—ऋषभः॥

धनुः प्रमोचन

प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम्। याश्च ते हस्तऽइषवः परा ता भगवो वप ॥९॥

१. राजा को प्रस्तुत मन्त्र में 'भगवः' शब्द से सम्बोधन किया है। **'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य धर्मस्य यशसः श्रियः। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीरणा॥'** इस वाक्य के अनुसार राजा ने राष्ट्र के ऐश्वर्य को बढ़ाना है, राष्ट्र में धर्म व शक्ति की वृद्धि करनी है। राष्ट्र को यशस्वी बनाना है, श्रीसम्पन्न करना है। राष्ट्र के लोगों में ज्ञान का विस्तार करके उन्हें विषयों के प्रति अनासक्त बनाना है। **भगवः**=हे ऐश्वर्यादि के साधक राजन्! **त्वम्**=तू **धन्वनः उभयोः आर्त्न्योः**=धनुष की दोनों कोटियों पर **ज्याम्**=डोरी को, प्रत्यञ्चा को **प्रमुञ्च**=(put on) धारण कर, अर्थात् अपने धनुष को, अस्त्रों को ठीक-ठाक कर। २. **च**=और **ते हस्ते**=आपके हाथ में **या इषवः**=जो बाण हैं, **ताः**=उन्हें **परावप**=सुदूर शत्रुओं पर फेंक। यहाँ 'परा' शब्द स्पष्ट कर रहा है कि राजा ने अस्त्रों का प्रयोग दूर शत्रुओं पर ही करना है न कि समीप अपनी ही प्रजाओं पर। अस्त्रों का प्रयोग शत्रुओं को दूर करने के लिए होना चाहिए, प्रजा की भावनाओं को कुचलने के लिए नहीं।

भावार्थ—राजा का धनुष शत्रुओं के निधन का कारण बने। शत्रुओं से देश को सुरक्षित कर राजा राष्ट्र के ऐश्वर्य को बढ़ानेवाला हो।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—भुरिगार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

विज्यं धनुः आभुःनिषङ्गधिः

विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ२॥ऽउत।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥१०॥

१. शत्रुओं को दूर भगाकर **कपर्दिनः**='केन सुखेन परं पूर्तिं ददाति'=प्रजाओं में सुख-विस्तार से तृप्ति देनेवाले, प्रजाओं में सुख को फैलानेवाले इस राजा का **धनुः**=धनुष, अब शत्रु-विजय के बाद **विज्यम्** =ज्यारहित हो जाता है। शत्रुओं को मारने के लिए गत मन्त्र में जिस धनुष पर ज्या को चढ़ाया था, वह धनुष अब विजय के बाद उतारी हुई ज्यावाला कर दिया गया है। २. **उत**=और **बाणवान्**=वह धनुष जोकि अब तक उत्तम बाणोंवाला था, अब **विशल्यः**=शल्यों से रहित हो गया है। ३. **अस्य**=इसके **याः इषवः**=जो शत्रु-शातन करनेवाले शर थे, वे सब अब **अनेशन्**=(णश् अदर्शन) अदृष्ट हो गये हैं। उन्हें अस्त्रागार में सुरक्षित रख दिया गया है। ४. **अस्य**=इसका **निषङ्गधिः**=(निषज्यते इति निषङ्गः खड्गः तद्यस्मिन् धीयते) म्यान, जिसमें कि अब तक तलवार विद्यमान थी, वह अब **आभुः**=रिक्त-खाली है। तलवार को भी ठीक-ठाक व तेज़ करने के लिए म्यान से निकाल कर अलग रख दिया गया है। ५. संक्षेप में, शत्रु को जीतकर यह राजा अब 'न्यस्तसर्वशस्त्र' हो गया है। अपनी प्रजा पर इसने अस्त्रों का प्रयोग थोड़े ही करना है।

भावार्थ—प्रजा में सुख-सञ्चार करनेवाले राजा का अस्त्रागार शत्रुओं के संहार के लिए है, प्रजा पर अत्याचार के लिए नहीं।

ऋषिः—प्रजापतिः। देवता—रुद्रः। छन्दः—निचृदनुष्टुप्। स्वरः—गान्धारः॥

मीढुष्टम

या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः। तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परि भुज ॥११॥

१. शत्रुओं के नाश व प्रजाओं के कल्याण के द्वारा यह राजा प्रजा पर सुखों की वर्षा करनेवाला है। हे **मीढुष्टम**=अधिक-से-अधिक सुखों के वर्षक राजन्! **या**=जो **ते**=तेरा **हेतिः**=शत्रुओं का संहार करनेवाला वज्र (नि० २।२०) है और **ते हस्ते**=तेरे हाथ में जो **धनुः बभूव**=धनुष है। २. **तया**=उस **अयक्ष्मया**=(नास्ति यक्ष्मा यस्य) सब रोगों—उपद्रवों को दूर करनेवाले अस्त्र से **अस्मान्**=हमें **विश्वतः**=सब ओर से **त्वं परिभुज**=आप परिपालित कीजिए। ३. राजा प्रान्तभागों पर इस प्रकार सशस्त्र सैन्य को सन्नद्ध रखता है कि राष्ट्र में किसी प्रकार का शत्रुजनित प्रकोप न हो, शान्त—बीमारियों से रहित राज्य में ही प्रजा उन्नत हो पाती है।

भावार्थ—'मीढुष्टम' वह राजा है जो हाथ में धनुष लिये हुए चारों ओर से होनेवाले आक्रमणों से राष्ट्र को सुरक्षित रखता (करता) है।

ऋषिः—प्रजापतिः। देवता—रुद्रः। छन्दः—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। स्वरः—गान्धारः॥

धन्वनो हेतिः इषुधिः

परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः।
अथो य इषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहि तम् ॥१२॥

१. हे राजन्! **ते**=तेरा **धन्वनः हेतिः**=धनुष-सम्बन्धी नाशक बाण **अस्मान्**=हमें **विश्वतः**=सब ओर से **परिवृणक्तु**=शत्रु-संकट से मुक्त करे (परिवर्जयतु—उ०), अर्थात् सब प्रान्तभाग इस प्रकार शस्त्र-सन्नद्ध सेना से युक्त हों कि कोई भी शत्रु हमारे राष्ट्र पर आक्रमण न कर सके। राजा के ये शत्रु-शातक तीर हमें शत्रु-संकट से सदा सुरक्षित रक्खें। २. परन्तु हे राजन्! **अथ उ**=अब यह **यः**=जो तेरा **इषुधिः**=बाणों के रखने का तूणीर (तरकस) है **तम्**=उसे **अस्मत्**=हमसे **आरे**=दूर ही **निधेहि**=रख, अर्थात् तेरे ये बाण अपनी प्रजा पर ही न चलने लगें।

भावार्थ—अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग शत्रुओं के शातन के लिए हो। अस्त्र-शस्त्रों को प्रजा से दूर ही रखना है।

ऋषिः—प्रजापतिः। देवता—रुद्रः। छन्दः—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। स्वरः—गान्धारः॥

शतेषुधि

अवतत्य धनुष्ट्वꣳसहस्राक्ष शतेषुधे।
निशीर्य शल्यानां मुखा शिवो नः सुमना भव ॥१३॥

१. हे शत्रुओं के विजेता **सहस्राक्ष**=गुप्तचररूपी हज़ारों आँखोंवाले! गुप्तचरों के द्वारा प्रजा की स्थिति या शत्रुओं की गतिविधि को भली प्रकार देखनेवाले! **शतेषुधे**=शत्रु-संहार के लिए अनन्त—बहुत अधिक तरकसोंवाले, अर्थात् अक्षीण अस्त्र-शस्त्रवाले राजन्! अब शत्रुओं को जीतकर **त्वम्**=तू **धनुः अवतत्य**=धनुष पर से डोरी को उतारकर और **शल्यानाम्**=बाणों के **मुखा**=मुखों को, अग्रभागों को, अर्थात् उनके फलाग्रों को **निशीर्य**=शीर्ण करके

नः=हमारे लिए **शिवः**=कल्याण करनेवाला और **सुमना भव**=शोभन मनवाला हो। २. विजय से प्रसन्न राजा प्रजाओं से उत्साहित व अभिनन्दित किया जाता हुआ, प्रजाओं के कल्याण को सिद्ध करनेवाला हो। वह प्रसन्न मनवाला तथा उत्साहपूर्वक राजकार्य करनेवाला बने। शत्रु-विजय के लिए इसके शस्त्र पर्याप्त हों, अनन्त हों, परन्तु प्रजा पर अत्याचार के समय वे कुण्ठित हों।

भावार्थ—१. राजा शत्रु की गतिविधि के ज्ञान के लिए शतशः गुप्तचरों को नियत करता है, अनन्त अस्त्र-शस्त्रों को सुसज्जित करता है। एवं, राजा शत्रु के लिए भयंकर है, २. परन्तु प्रजा के लिए निरस्त्र होकर कल्याणकर व शोभन मनवाला है।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—स्वराडार्ष्युष्णिक्। **स्वरः**—ऋषभः॥

अनातत आयुध

नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे। उभाभ्यामुत ते नमो बाहुभ्यां तव धन्वने॥१४॥

१. हे राजन्! **ते**=तेरे **धृष्णवे**=धर्षणशील—शत्रुसंहार में निपुण, पर **अनातताय**=जिसकी धनुष पर आरोपित करने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती, ऐसे उस **आयुधाय**=आयुध के लिए—शस्त्र-समूह के लिए अथवा जो प्रजा को दबाने के लिए कभी धनुष पर आरोपित नहीं किया जाता, उस आयुध के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं, उसके महत्त्व की प्रशंसा करते हैं। २. हे राजन्! **उत**=और **ते**=तेरे **उभाभ्याम्**=दोनों **बाहुभ्याम्**=प्रयत्नों के लिए, अर्थात् बाह्यशत्रुओं के नाश तथा प्रजा-रक्षणरूप प्रयत्न के लिए **नमः**=हम तेरा आदर करते हैं। ३. इन दोनों प्रयत्नों में सहायभूत **तव धन्वने**=तेरे इस धनुष के लिए हम आदर करते हैं। ४. यहाँ प्रस्तुत मन्त्र में 'आयुधाय' शब्द से आयुधों का होना तो आवश्यक है परन्तु 'अनातताय' शब्द स्पष्ट कह रहा है कि यथासम्भव इनका प्रयोग न ही करना पड़े। ५. 'उभाभ्यां बाहुभ्यां' इन शब्दों से राजा के इन दोनों मौलिक कर्त्तव्यों का भी स्पष्ट प्रतिपादन है कि (क) उसने युद्ध द्वारा शत्रुओं को जीतना है, उनके आक्रमणों से देश की रक्षा करनी है, और (ख) प्रजा की अन्तः उपद्रवों से भी रक्षा करनी है। 'सेना पहला कार्य करेगी,' तो राजपुरुष (police) दूसरे कार्य को। राजा के ये दोनों कार्य आदरणीय होते हैं। इन कार्यों के साधक अस्त्र भी आदृत होते हैं।

भावार्थ—हम 'शत्रुनाशक, राष्ट्ररक्षक' राजा का आदर करें। राष्ट्र की रक्षा करनेवाला राजा ही प्रस्तुत मन्त्रों का ऋषि 'प्रजापति' कहलाने योग्य है।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—निचृदार्षीजगती। **स्वरः**—निषादः॥

सर्वरक्षण

मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्भकं मा नऽउक्षन्तमुत मा नऽउक्षितम्।
मा नो वधीः पितरं मोत मातरं मा नः प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः॥१५॥

१. राज्य-व्यवस्था के उत्तम होने पर अपने जीवनों को उत्तम बनाकर हम प्रभु से—प्रार्थना करें हे **रुद्र**=ज्ञान देनेवाले और उस ज्ञान के अनुसार आचरण करनेवालों के दुःखों को दूर करनेवाले प्रभो! **नः**=हमारे **महान्तम्**=बड़े पुरुष को **मा रीरिषः**=मत हिंसित कीजिए। आपकी कृपा से उनके दीर्घ जीवन के परिणामस्वरूप हमारे सिरों पर उनकी छत्रछाया बनी रहे। २. **उत**=और **नः**=हमारे **अर्भकम्**=छोटों को भी **मा रीरिषः**=मत हिंसित

कीजिए। बड़ों के निर्देश व निरीक्षण छोटों के कल्याण का कारण होते ही हैं। ३. **नः**=**उक्षन्तम्**=गृहस्थ में नव प्रवेशवाले—सन्तति के लिए वीर्यसेक्ता तरुण को **मा**=मत हिंसित कीजिए। वे संयमी जीवनवाले होकर दीर्घ जीवी बनें। ४. **उत**=और **नः**=हमारे **उक्षितम्**=सिक्त, गर्भस्थ बालक को **मा**=मत हिंसित कीजिए। वीर्यसेक्ता के परिपक्व वीर्यवाला होने पर गर्भस्थ सन्तान कभी विपन्न नहीं होती। ५. **नः**=हमारे **पितरम्**=पिता को **मा वधीः**=मत विपन्न कीजिए। पिता के चले जाने पर घर का रक्षण कैसे होगा? ६. **उत**=और **मातरं मा वधीः**=हमारी माता को भी सुरक्षित कीजिए। वस्तुतः उसे सन्तानों में कुल-धर्मों की परम्परा को सुरक्षित करना है, सन्तानों के चरित्र का निर्माण माता ने ही करना है। ७. हे रुद्र! आप **नः**=हमारे **प्रियाः तन्वः**=जिनका तर्पण किया गया है (प्रीञ् तर्पणे) उचित भोजनादि के द्वारा जिनका ठीक पोषण किया गया है, जिन्हें हमने स्वास्थ्य की कान्ति प्राप्त कराने का प्रयत्न किया है, उन हमारे प्रिय शरीरों को **मा रीरिषः**=मत हिंसित होने दीजिए। ८. 'रुद्र' राजा का सेनापति भी है जो शत्रुओं को रुलाने का कारण बनता है। युद्ध के अवसर पर उन 'योद्धा लोगों को चाहिए कि वृद्धों, बालकों, युद्ध न कर रहे युवकों, गर्भों, योद्धाओं के माता-पिताओं, सब स्त्रियों, युद्ध के देखनेवालों और दूतों को न मारें' (द०)। यदि ये लोग कैदी बनाये जा सकें तो इनको वश में रक्खें, परन्तु मारें नहीं। सेनापति 'कुत्स' है (कुथ हिंसायाम्) वह राष्ट्र के शत्रुओं का संहार करता है, परन्तु युद्ध में भाग न लेनेवालों को नहीं मारता।

भावार्थ—प्रभु हम सबका रक्षण करनेवाले हैं। हमें भी चाहिए कि युद्ध उपस्थित होने पर भी युद्ध में भाग न लेनेवालों का हम संहार न करें।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—निचृदार्षीजगती। **स्वरः**—निषादः॥

हविष्मान् की आराधना

मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्वेषु रीरिषः।
मा नो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित् त्वा हवामहे॥१६॥

१. **नः**=हमारे **तोके**=पुत्र के विषय में **मा रीरिषः**=हिंसा मत कीजिए। **तनये**=वंश का विस्तार करनेवाले पौत्र के विषय में भी हिंसा न कीजिए। २. **नः आयुषि**=हमारे जीवन के विषय में भी हिंसा न कीजिए तथा ३. **नः**=हमारी **गोषु**=गौवों के विषय में **नः**=हमारे **अश्वेषु**=घोड़ों के विषय में (गोऽजाव्यादिषु, तुरङ्गहस्त्युष्ट्रादिषु—द०) गौ, बकरी, भेड़ आदि तथा घोड़ा, हाथी, ऊँट आदि को **मा रीरिषः**=हिंसित मत कीजिए। ४. हे **रुद्र**=शत्रुओं के रुलानेवाले! तू **नः**=हमारे **भामिनः वीरान्**=(shining, beautiful) तेजस्वी, स्वास्थ्य के सौन्दर्यवाले वीरों को **मा वधीः**=मत नष्ट कर। ५. **हविष्मन्तः**=हवि=बचे हुए को खानेवाले होकर **सदम् इत्**=सदा ही हम **त्वां हवामहे**=आपकी प्रार्थना करते हैं। प्रभु की उपासना 'हविवाले' बनने से ही होती है। ६. रुद्र की भावना सेनापति की लेने पर अर्थ होगा **हविष्मन्तः**=देव पदार्थों को लेकर **सदम्**=न्याय में आसीन **त्वा**=तुझे **इत्**=निश्चय से **हवामहे**=(स्वीकुर्महे) स्वीकार करते हैं।

भावार्थ—प्रभु-कृपा से हमारे पुत्र-पौत्र दीर्घजीवी हों। हमारे गवादि पशु सुरक्षित हों। हमारे तेजस्वी युवक असमय में न चले जाएँ।

ऋषिः—कुत्सः। देवता—रुद्रः। छन्दः—निचृदतिधृतिः। स्वरः—षड्जः॥

नमः=आदर

नमो॒ हिर॑ण्यबाहवे सेना॒न्ये॒ दि॒शां च॒ पत॑ये॒ नमो॒ नमो॑ वृ॒क्षेभ्यो॒ हरि॑केशेभ्यः पशू॒नां पत॑ये॒ नमो॒ नमः॒ शष्पिञ्ज॑राय॒ त्विषी॑मते पथी॒नां पत॑ये॒ नमो॒ नमो॒ हरि॑केशायोपवी॒तिने॑ पुष्टा॒नां पत॑ये॒ नमः॑ ॥१७॥

१. राष्ट्र में सबसे पहले हम **हिरण्यबाहवे**=हितरमणीय प्रयत्नवाले (हिरण्य=हितरमणीय, बाह्र प्रयत्ने) अथवा भुजाओं में शक्ति को धारण करनेवाले (द०) अथवा (हिरण्यालंकार-भूषितबाहवे) स्वर्णाभूषण से अलंकृत भुजावाले **सेनान्ये**=सेनापति के लिए **नमः**=आदर देते हैं। उस सेनापति के लिए जो **दिशां च पतये**=राष्ट्र की सब दिशाओं में रक्षा करनेवाला है, हम **नमः**=नमन करते हैं। एवं, सेनापति का कार्य राष्ट्र-रक्षा करने के लिए सदा हित-रमणीय प्रयत्नों में प्रवृत्त रहना है। २. उन **वृक्षेभ्यः**=वृक्षों के लिए जो **हरिकेशेभ्यः**=हरित वर्ण के पत्र-केशोंवाले हैं, अथवा जिनमें हरणशील सूर्य-किरणें प्राप्त हैं, (द०) **नमः**=हम आदर करते हैं, इस बात का हम पूर्ण ध्यान करते हैं कि राष्ट्र में वृक्षों की कमी न हो जाए। इन वृक्षों के साथ **पशूनां पतये नमः**=राष्ट्र के उस अधिकारी का भी हम आदर करते हैं जो पशुओं का रक्षण करता है, जो राष्ट्र में गवादि उत्तम पशुओं की कमी नहीं होने देता। सेनापति ने देश की सब दिशाओं से रक्षा करनी है तो वनाध्यक्ष ने वृक्षों का रक्षण करना है और पशुओं के अध्यक्ष ने राष्ट्र की पशु-सम्पत्ति को नष्ट नहीं होने देना। ३. हम **शष्पिञ्जराय**=(शडुत्प्लुतं पिञ्जरं बन्धनं येन-द०) विषयादि के बन्धनों से पृथक् **त्विषीमते**=(बह्व्यस्त्विषयो न्यायदीप्तयो विद्यन्ते यस्य-द०) न्याय के प्रकाशों से युक्त राष्ट्र के न्यायाधीश के लिए **नमः**=नतमस्तक होते हैं। उस न्यायाधीश के लिए जो **पथीनां पतये**=न्याय के द्वारा मार्गों का रक्षक है हम **नमः**=नतमस्तक होते हैं। जिस भी राष्ट्र में दण्ड का प्रणयन न्यायपूर्वक होता है, उस राष्ट्र में ही प्रजा धर्म के मार्ग पर चलती है। 'दण्डं धर्मं विदुर्बुधाः'=न्याय-प्रणीत दण्ड को ही विद्वान् लोग धर्म का रक्षक जानते हैं। ४. अन्त में **नमः**=उसका हम आदर करते हैं जो **हरिकेशाय**=प्रजाओं के दुःखहरण से 'हरि' है, सुखप्रापण से 'क' और न्यायशासन करने से 'ईश' है। **उपवीतिने**=प्रशस्त यज्ञोपवीतवाले के लिए, अर्थात् जिसने उपवीत के तीन तारों को धारण करते हुए तीन व्रत लिये हैं कि (क) शरीर को वज्रतुल्य बनाऊँगा। (ख) मन की वासनाओं को छेदने के लिए 'परशु' बनूँगा। (ग) मेरा जीवन अविच्छिन्न ज्ञान का होगा (अश्मा भव, परशुर्भव, हिरण्यमस्तृतं भव)। उसके लिए **नमः**=हम नतमस्तक होते हैं जो **पुष्टानां पतये**=(पुष्+क्त भावे)=सब पोषणों का पति है। शारीरिक, मानस व बौद्ध पोषण करनेवाला है, इस आदर्श राष्ट्रपुरुष, के लिए भी हम आदर देते हैं। ५. सेनापति, वनाध्यक्ष, पश्वाध्यक्ष, न्यायाधीश व मुख्य राष्ट्रपुरुष, अर्थात् राजा ये सब 'कुत्स' हैं, ये सब राष्ट्र की खराबियों को दूर करनेवाले हैं।

भावार्थ—हम राष्ट्र के मन्त्र-वर्णित अधिकारियों के उचित आदर से राष्ट्रोन्नति में सहायक हों।

ऋषिः—कुत्सः। देवता—रुद्राः। छन्दः—निचृदष्टिः। स्वरः—मध्यमः॥

अन्न-क्षेत्र-वन

नमो॑ बभ्लु॒शाय॑ व्या॒धिने॑ऽन्ना॒नां पत॑ये॒ नमो॒ नमो॑ भ॒वस्य॑ हे॒त्यै॑ जग॑ता॒ं पत॑ये॒ नमो॒ नमो॑ रु॒द्राया॑तता॒यिने॒ क्षेत्रा॑णा॒ं पत॑ये॒ नमो॒ नमः॑ सू॒ताया॑हन्त्यै॒ वना॑ना॒ं पत॑ये॒ नमः॑ ॥१८॥

१. **बभ्लुशाय** (बभ्लुषु राज्यधारकेषु शेते कर्मसु–द०)=सदा राज्यधारक कर्मों में निवास करनेवाले, **व्याधिने** (विध्यति–उ०)=शत्रुओं का वेधन करनेवाले के लिए, राष्ट्र-रक्षा के लिए शत्रुओं का संहार करनेवाले का **नमः**=हम आदर करते हैं। शत्रु-संहार के साथ **अन्नानां पतये**=अन्नों के रक्षक के लिए हम **नमः**=नमस्कार करते हैं। राजा ने जहाँ शत्रु-संहार के लिए सेना व अस्त्रादि पर ध्यान देना है वहाँ उसने अन्न की भी पूर्ण व्यवस्था करनी है। शत्रुओं से बची हुई प्रजा कहीं अन्न-संकट का शिकार न हो जाए। राष्ट्र में गोलियाँ-ही-गोलियाँ (bullets and bullets) न हों, भोजन (bread) भी हो। २. **भवस्य**=संसार के ऐश्वर्य की (भूतिः भव=ऐश्वर्य) **हेत्यै**=(हि वृद्धौ) वृद्धि करनेवाले का हम **नमः**=आदर करते हैं। राजा का कर्त्तव्य है कि वह राष्ट्र के ऐश्वर्य को बढ़ाए और इस ऐश्वर्य वृद्धि के द्वारा **जगतां पतये नमः**=क्रियाशील पुरुषों की रक्षा करनेवाले के लिए हम नतमस्तक होते हैं। राष्ट्र में कोई भी आलसी, अकर्मण्य व याचक नहीं होना चाहिए। ३. **रुद्राय**=शत्रुओं के रुलानेवाले **आततायिने**=(आ समन्तात् ततं शत्रुदलमेतुं शीलमस्य–द०) चारों ओर फैले हुए शत्रुदलों पर आक्रमण करनेवाले के लिए हम **नमः**=नमस्कार करते हैं, परन्तु साथ ही **क्षेत्राणां पतये**=अन्न-क्षेत्रों की रक्षा करनेवाले को **नमः**=हम आदर देते हैं। शत्रुनाश के साथ क्षेत्रों के नाश होने पर शत्रुनाश से बची हुई प्रजा अन्नाभाव से मृत हो जाएगी। ४. अन्त में **सूताय**=उत्तम प्रेरणा देनेवाले और उस उत्तम प्रेरणा के द्वारा **आहन्त्यै**=न नष्ट होने देनेवाले धर्माध्यक्ष को **नमः**=हम आदर देते हैं। अथवा **सूताय** =उस सारथि के लिए जो **आहन्त्यै**=(हन्=गति) युद्ध में सर्वत्र घोड़ों को ले-जानेवाला है हम आदर देते हैं और **वनानाम्**=(Those who win) विजेताओं के **पतये**=मुखिया के लिए **नमः**=हम नतमस्तक होते हैं। अथवा **वनानाम्**=(वन=light) प्रकाश की किरणों के **पतये**=स्वामी के लिए, अर्थात् उत्कृष्ट ज्ञानियों के लिए हम आदर देते हैं। वन 'शब्द का अर्थ घर' भी है। राष्ट्र में घरों के पति (Housing administrator) के लिए हम आदर देते हैं, उस अध्यक्ष के लिए जिसका काम घरों की उचित व्यवस्था करना है। अथवा वनों–जङ्गलों के रक्षक का हम आदर करते हैं।

भावार्थ–हम राष्ट्र-रक्षक पुरुषों का उचित आदर करें।

ऋषिः–कुत्सः। **देवता**–रुद्रः। **छन्दः**–विराडतिधृतिः। **स्वरः**–षड्जः॥

शिल्पी-कृषक-व्यापारी

नमो रोहिताय स्थपतये वृक्षाणां पतये नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनां पतये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्षाणां पतये नमो नमऽउच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनां पतये नमः ॥१९॥

१. **रोहिताय**=(वृद्धिकराय–द०) राष्ट्र की सम्पत्ति को बढ़ानेवाले **स्थपतये**=गृहादि के बनानेवाले शिल्पियों का **नमः**=हम आदर करते हैं। इसी शिल्प की उन्नति के लिए **वृक्षाणां पतये**=शिल्पोपयोगी काष्ठों को प्राप्त करानेवाले वृक्षों के रक्षकों का **नमः**=हम आदर करते हैं। घर आदि के निर्माण में लकड़ी का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, घर का सारा परिच्छद (Furniture) लगभग इसी पर आश्रित है। २. **भुवन्तये**=भुवं तनोति=कृषि-योग्य भूमि का विस्तार करनेवाले के लिए, भूमि जोतनेवाले के लिए, और इस प्रकार **वारिवस्कृताय** (वरिवः=धनं वरिवस्कृदेव वारिवस्कृतः स्वार्थे अण्) धन के उत्पादक के लिए **नमः**=हम

नमस्कार करते हैं। इस कृषि के द्वारा **ओषधीनां पतये**=विविध ओषधियों के रक्षक व स्वामी के लिए हम **नमः**=आदर देते हैं। यहाँ 'भुवन्तये' शब्द से साम्राज्य-वृद्धि की भावना लेना उपयुक्त नहीं। ३. अब शिल्प व कृषि से उत्पन्न पदार्थों को विचारपूर्वक मण्डियों (Market) में ले-जानेवाले **मन्त्रिणे**=विचारशील **वाणिजाय**=व्यापारी के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं और व्यापार की रक्षा के लिए **कक्षाणां पतये** (कक्ष=Gate)=सब द्वारों के रक्षकों का हम **नमः**=आदर करते हैं। इन द्वारों की रक्षा न होने पर तस्कर-व्यापार (Smuggling) बढ़ जाता है। इसके रोकने के लिए देश में प्रविष्ट होने के साधनभूत सब द्वारों की रक्षा होनी चाहिए। कक्ष शब्द का अर्थ 'वनलतागुल्मवीरुध आदि' भी है। इनसे नाना प्रकार की ओषधियों का निर्माण होता है, अतः इनके रक्षक का हम आदर करते हैं। ४. 'कक्ष' का अर्थ सामन्त (border) प्रदेश भी है। व्यापार की रक्षा के लिए और विशेषतः तस्कर व्यापार को रोकने के लिए सामन्त देश में नियुक्त सेना का जो सेनापति है जो **उच्चैःघोषाम्**=खूब गर्जती हुई आवाज़वाला है और **आक्रन्दयते**=युद्ध में शत्रुओं का सामना करनेवाला है तथा **पत्तीनां पतये**=जो पत्तियों का स्वामी है उसका हम आदर करते हैं। 'एको रथो गजश्चाश्वस्त्रयः पंच पदातयः। एष सेनाविशेषोऽयं पत्तिरित्यभिधीयते'=एक रथ, एक हाथी, तीन घोड़े, पाँच प्यादे—ये मिलकर 'पत्ति' कहलाती है। सामन्त प्रदेश में स्थान-स्थान पर इस प्रकार की पत्ति की व्यवस्था होती है। इन पत्तियों के स्वामी को हम आदर देते हैं।

भावार्थ—राष्ट्र में 'शिल्पी, कृषक या व्यापारी' ये सब उचित आदर पाएँ तथा प्रान्तभाग पर रक्षा के लिए नियत पत्तियों के पति का भी हमें आदर करना है।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—अतिधृतिः। **स्वरः**—षड्जः॥

रक्षक पुरुष

नमः कृत्स्नायतया धावते सत्वनां पतये नमो नमः सहमानाय निव्याधिनऽआव्याधिनीनां पतये नमो नमो निषङ्गिणे ककुभाय स्तेनानां पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्यानां पतये नमः ॥२०॥

१. गत मन्त्र की समाप्ति 'प्रान्तभाग पर नियुक्त रक्षकों के आदर' से हुई थी। उसी प्रसङ्ग को आगे कहते हैं कि **कृत्स्नायतया**=पूर्णरूप से (कृत्स्न) आयत खेंचे हुए आकर्णपूर्ण धनुष् के साथ **धावते**=रक्षा के लिए इधर-उधर भागते हुए अथवा सबके (आय) लाभ के दृष्टिकोण से गति करते हुए **सत्वनां पतये**=प्राणियों के रक्षक का **नमः**=हम आदर करते हैं। २. **सहमानाय**=(अरीन् सहते अभिभवति) शत्रुओं का पराभव करनेवाले **निव्याधिने**=(नितरां विध्यति) शत्रुओं का खूब वेधन करनेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं, और **आव्याधिनीनाम्**=समन्तात् शत्रुओं का वेधन करनेवाली शूर सेनाओं के **पतये**=पति का **नमः**=हम आदर करते हैं। **निषङ्गिणे**=तलवारवाले के लिए (द०) अथवा बाण, असि, बन्दूक, तोप व तोमर आदि शस्त्रवाले के लिए **ककुभाय**=महान् के लिए (द०), प्रसन्नमूर्त्ति के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। **ककुभाय** =जो देखने में शानदार (Grand) लगता है, उसके लिए, और **स्तेनानां पतये**=अन्याय से परस्व—पराये धन को लेनेवालों को (पातयिष्णवे—द०, दण्डादिशोषकाय) दण्डादि से शोषित करनेवाले को **नमः**=हम आदर देते हैं। ४. **निचेरवे**=(नितरां पुरुषार्थे चरति—द०) निरन्तर पुरुषार्थ के साथ विचरनेवाले **परिचराय**=धर्म, विद्या, माता-पिता, स्वामी व मित्राादि की सेवा करनेवाले के लिए तथा **अरण्यानां पतये**=अरण्य में निवास

करनेवाले वानप्रस्थों के रक्षक के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं।

भावार्थ—चोरों व शत्रुओं से बचाकर सब वनस्थों की रक्षा करनेवाले राजपुरुषों को हम उचित आदर देते हैं।

ऋषिः—कुत्सः। देवता—रुद्राः। छन्दः—निचृदतिधृतिः। स्वरः—षड्जः॥

वञ्चन् परिवञ्चन

नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां पतये नमो नमो निषङ्गिणऽइषुधिमते तस्कराणां पतये नमो नमः सृकायिभ्यो जिघांसद्भ्यो मुष्णतां पतये नमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तं चरद्भ्यो विकृन्तानां पतये नमः॥२१॥

१. (क) **वञ्चते**=गति करनेवाले के लिए और **परिवञ्चते**=राष्ट्र में सर्वत्र विचरनेवाले को **नमः**=हम आदर देते हैं। राजपुरुष व राजा वही ठीक है जो कुर्सी पर ही न बैठा रहे, अपितु सर्वत्र घूमे। सर्वत्र घूमकर **स्तायूनाम्**=चोरों को **पतये**=दण्डप्रहार से गिरानेवाले का हम **नमः**=आदर करते हैं। स्तेन और स्तायु में यह भेद है कि घर में सेन्ध आदि लगाकर रात्रि में द्रव्यहरण करनेवाला 'स्तेन' है, अपने ही नौकर-चाकर दिन-रात अज्ञातरूप से द्रव्यहरण करनेवाले 'स्तायु' हैं। (ख) 'वञ्चते' का अर्थ छल से पर-पदार्थों का हरण करनेवाला भी है तब 'परिवञ्चते' का अर्थ होगा सब प्रकार से कपट के साथ व्यवहार करनेवाला। इनके लिए **नमः**=(वज्रादिशस्त्रप्रहरणम्—द०) वज्रादि शस्त्रों से प्रहार हो। २. **निषङ्गिणे**=चोरों से रक्षा के लिए तलवार आदि अस्त्रों का धारण करनेवाले का **इषुधिमते**=उत्तम तरकसवाले का **नमः**=हम आदर करते हैं और **तरस्कराणां**=डाकुओं का **पतये**=पतन करनेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। ३. **सृकायिभ्यः**=वज्र के साथ गति करनेवालों के लिए (सृकेण एतुं शीलं येषाम्) और उस वज्र से **जिघांसद्भ्यः**=शत्रुओं को नष्ट करने की इच्छावालों के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। भ्रमण करते हुए, गश्त लगाते हुए जब कभी ये क्षेत्रों से अन्नापहरण करते हुए लोगों को देखते हैं तब उन **मुष्णताम्**=खेतों से चोरी करनेवालों के **पतये**=पतन करनेवालों का **नमः**=हम आदर करते हैं। ४. **नक्तंचरेभ्यः**=रात्रि में विचरनेवालों के वध के लिए **असिमद्भ्यः**=तलवार से सुसज्जित पुरुषों का **नमः**=हम आदर करते हैं और इस प्रकार रात्रि में पहरा देते हुए **विकृन्तानाम्**=छेदन-भेदन करनेवालों को **पतये**=दण्ड से गिरानेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। 'विकृन्तानां' का अर्थ आचार्य ने 'गठकतरे' किया है, वह अर्थ भी बड़ा उपयुक्त है। रक्षापुरुषों ने 'स्तायु, तस्कर, मुष्णताम् व विकृन्तों' से प्रजा-जनों की रक्षा करनी है।

भावार्थ—रक्षापुरुषों का कार्य है कि वे १. घर में ही रहनेवाले और चोरी कर लेनेवाले नौकरों से, २. लुटेरों से, ३. खेत आदि से धान का अपहरण करनेवालों से तथा, ४. गठकतरों व छेदन-भेदन करनेवालों से प्रजा-जनों की रक्षा करें।

ऋषिः—कुत्सः। देवता—रुद्राः। छन्दः—निचृदष्टिः। स्वरः—मध्यमः॥

उष्णीषिणे व गिरिचर—ग्रामणी व गिरिचर

नमऽउष्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानां पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्च वो नमो नमऽआतन्वानेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्च वो नमो नमऽआयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमः॥२२॥

१. **उष्णीषिणे**=जिसके माथे पर पगड़ी रक्खी गई है, उस प्रशस्त पगड़ीवाले ग्रामणी के लिए जो **गिरिचराय**=वेदवाणी में स्थित होकर विचरण करनेवाला है, अर्थात् शास्त्रानुकूल ग्राम की सब व्यवस्था करनेवाला है, उसके लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। इस 'गिरिचर ग्रामणी' के लिए जो **कुलुञ्चानाम् (कुत्सितं लुञ्चन्ति)**=बुरी तरह से अपहरण करनेवालों का अथवा कुलानि लुञ्चन्ति=कुलों को बरबाद करनेवालों का अथवा कुशीलेन लुञ्चन्ति (द०)=बुरे स्वभाव से धनों के नष्ट करनेवालों का **पतये**=दण्ड से पतन करनेवाला है, उस गिरिचर ग्रामणी के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। २. ग्राम आदि की रक्षा के लिए नियत **वः**=तुम **इषुमद्भ्यः**=प्रशस्त बाणोंवालों के लिए, **धन्वायिभ्यः च**=(धन्वना यन्ति—म०) धनुष के साथ विचरनेवालों के लिए **नमः**=नमस्कार करते हैं। ३. **आतन्वानेभ्यः**=धनुष पर ज्या को चढ़ानेवालों के लिए **च**=और उन धनुषों पर **प्रतिदधानेभ्यः**= बाण सन्धान करनेवाले **वः**=तुम्हारे लिए **नमः**=नमस्कार हो। ४. **आयच्छद्भ्यः**=इन धनुषों का आकर्षण करनेवालों के लिए **नमः**=नमस्कार हो, **च**=और **वः**=तुम्हारे **अस्यद्भ्यः**=बाणादि को फेंकनेवाले रक्षापुरुषों के लिए **नमः**=नमस्कार हो।

भावार्थ—ग्राम के मुखिया को शास्त्रानुसार व्यवहार करना है और कुलुञ्चों का नाश करने के लिए रक्षा-पुरुषों को नियत करना है।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदतिजगती। **स्वरः**—निषादः॥

कार्य व विश्राम

नमो॑ विसृ॒जद्भ्यो॒ विद्ध्य॑द्भ्यश्च वो॒ नमो॒ नमः॒ स्व॒पद्भ्यो॒ जाग्र॑द्भ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॒ः शया॑नेभ्य॒ऽआसी॑नेभ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॒स्तिष्ठ॑द्भ्यो॒ धाव॑द्भ्यश्च वो॒ नमः॑ ॥२३॥

१. **विसृजद्भ्यो नमः**=शत्रुओं पर बाणों को छोड़ते हुओं का हम आदर करते हैं (Honour to those) **विद्ध्यद्भ्यः च वः**=और तुममें से शत्रुओं का वेधन करते हुओं के लिए **नमः**=हम आदर देते हैं। २. अपना कार्य करने के बाद **स्वपद्भ्यः**=सोते हुओं का **नमः**=हम आदर करते हैं **च**=उनके लिए भी **नमः**=आदर करते हैं जो **वः**=आपमें से **जाग्रद्भ्यः**=जाग रहे हैं—अपने कार्य में जागरूक हैं। ३. **शयानेभ्यः** =थककर लेटे हुओं का हम आदर करते हैं और **वः**=तुममें से **आसीनेभ्यः च**=बैठे हुओं का हम **नमः**=आदर करते हैं। ४. **वः**=आपमें से **तिष्ठद्भ्यः**=खड़े हुओं के लिए हम **नमः**=नमस्कार करते हैं **च धावद्भ्यः**=और कार्यवश इधर-उधर भागते हुओं का हम **नमः**=आदर करते हैं।

भावार्थ—हम उन सब रक्षा-पुरुषों का आदर करते हैं जो कार्य पर उपस्थित हैं या कार्य के बाद विश्राम की स्थिति में हैं।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—शक्वरी। **स्वरः**—धैवतः॥

सभा-सभापति (war-council)

नम॑ः स॒भाभ्य॑ः स॒भाप॑तिभ्यश्च वो॒ नमो॒ नमो ऽश्वे॒भ्यो ऽश्व॑पतिभ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॑ऽआव्या॒धिनी॑भ्यो वि॒विध्य॑न्तीभ्यश्च वो॒ नमो॒ नम॒ऽउग॑णाभ्यस्तृ॒ꣳ ह॒तीभ्य॑श्च वो॒ नम॑ः ॥२४॥

१. **सभाभ्यः**=शान्ति व युद्ध के समय देश की समृद्धि व रक्षा के विषय में विचार करने के लिए (सह भान्ति) एकत्र हुए विद्वानों का हम **नमः**=आदर करते हैं, **च**=और **वः**=आप **सभापतिभ्यः च**=उन सभा के सञ्चालकों का हम **नमः**=आदर करते हैं। २. **अश्वेभ्यः**=युद्ध में प्रमुख स्थान रखनेवाले तथा शान्ति के समय भी यातायात के प्रमुख साधनभूत घोड़ों को हम **नमः**=आदर देते हैं, **च**=और **वः**=आप **अश्वपतिभ्यः**=घोड़ों के रक्षकों व स्वामियों के लिए भी हम **नमः**=आदर का भाव रखते हैं। युद्ध का विजय करनेवाले इन घुड़सवार सैनिकों का आदर होना ही चाहिए। शान्ति के समय भी सामान को इधर-उधर पहुँचानेवाले इन अश्वस्वामियों को हम आदर प्राप्त कराते हैं। ३. **आव्याधिनीभ्यः**=समन्तात् शत्रुओं का वेधन करनेवाली सेनाओं के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं **च**=और **वः**=आपकी इन **विविध्यन्तीभ्यः**=विशेषरूप से शत्रुओं का वेधन करनेवाली सेनाओं का हम **नमः**=आदर करते हैं। ५. **उगणाभ्यः**=(उत्कृष्टा गणा यासां) उत्कृष्ट सैनिकगणोंवाली सेनाओं का **नमः**=हम आदर करते हैं **च**=और **वः**=आपकी **तृंहतीभ्यः**=शत्रु-हिंसन करती हुई सेनाओं का **नमः**=आदर होता है।

भावार्थ—राष्ट्र की सभाओं, सभापतियों, अश्वों, अश्वपतियों व अन्य शत्रुसंहारक सेनाओं का हम आदर करें।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—भुरिक्शक्वरी। **स्वरः**—धैवतः॥

गण-गणपति

नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥२५॥

१. **गणेभ्यः**=एक स्थान पर रहनेवालों ने जो सहकर्मकर्तृ संघ (Co-operative societies) बना लिये हैं, उन 'संघों' का **नमः**=हम आदर करते हैं **च**=और **वः**=आप **गणपतिभ्यः**=इन संघों के अध्यक्षों के लिए **नमः**=हम आदर देते हैं। २. **व्रातेभ्यः**=एक प्रकार के काम करनेवालों ने (जैसे टाङ्गेवाले, मोटरवाले, रिक्शावाले) जो संघात (unions) बना लिये हैं, उन संघातों का हम **नमः**=आदर करते हैं **च**=और **वः**=आप **व्रातपतिभ्यः**=इन संघातों के मुखियाओं के लिए हम **नमः**=उचित सम्मानभाव रखते हैं। ३. **गृत्सेभ्यः**=(गृणन्ति) औरों के लिए सदा हित का उपदेश देनेवाले मेधावी पुरुषों के लिए **नमः**=नमस्कार हो, **च**=और **वः**=आपके इन **गृत्सपतिभ्यः**=विद्वानों के रक्षकों का (जो धनी पुरुष इन विद्वानों को वृत्ति देकर परिपालित करते हैं, उनका) **नमः**=हम आदर करते हैं। ४. **विरूपेभ्यः**=तेजस्विता के कारण विशिष्ट रूपवाले क्षत्रियों का **नमः**=हम आदर करते हैं, **च**=और **वः**=आप **विश्वरूपेभ्यः**=सबको अपना ही रूप समझनेवाले, 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का सिद्धान्त माननेवालों के लिए हम **नमः**=नतमस्तक होते हैं।

भावार्थ—हम राष्ट्र में बने हुए गणों व व्रातों को उचित सम्मान दें। मेधावी पुरुष व तेजस्वी पुरुष तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्त को माननेवाले पुरुष आदरणीय हैं।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—भुरिगतिजगती। **स्वरः**—निषादः॥

सेना-सेनापति

नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्योऽअरथेभ्यश्च वो नमो नमः क्षत्तृभ्यः संग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्च वो नमः ॥२६॥

१. **सेनाभ्यः नमः**=हम राष्ट्र की सेनाओं का आदर करते हैं, **च**=और **वः**=आप **सेनानिभ्यः नमः**=सेनानायकों का हम आदर करते हैं। २. **रथिभ्यः**=सेना के अङ्गभूत रथियों के लिए **नमः**=आदर हो तथा **वः**=आप **अरथेभ्यः**=अविद्यमान रथवालों का भी **नमः**=हम आदर करते हैं। ३. **क्षत्तृभ्यः**='क्षिपन्ति प्रेरयन्ति सारथीन्' रथों के अधिष्ठाताओं के लिए **नमः**=आदर हो, **च**=और **वः**=आपके **संग्रहीतृभ्यः**=अश्वों की लगामों का संग्रहण करनेवालों के लिए **नमः**=नमस्कार हो। ४. **महद्भ्यः**=वर्ण, विद्या, स्थिति आदि की दृष्टि से बड़ों के लिए **नमः**=आदर हो **च**=और **वः**=आपके **अर्भकेभ्यः**=छोटे, निचले कर्मचारियों के लिए **नमः**=आदर हो।

भावार्थ—राष्ट्र-रक्षा करनेवाली सेनाओं, सेनापतियों, रथियों, पैदलों, अश्वाध्यक्षों, अश्वचालकों तथा बड़े-छोटे सभी का प्रजाजन आदर करें।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृच्छक्वरी। **स्वरः**—धैवतः॥

तक्षा-रथकार (शिल्प-जातियाँ)

नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमो नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः ॥२७॥

१. राष्ट्र के अन्य सेवकों का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि **तक्षभ्यः**=(काष्ठं तक्ष्णुवन्ति) रन्दा चलानेवाले बढ़ई आदि के लिए हम **नमः**=आदरभाव रखते हैं, **च**=और **वः**=इन बढ़इयों में **रथकारेभ्यः**=विविध प्रकार के रथों के निर्माताओं के लिए **नमः**=हम आदर का भाव प्रदर्शित करते हैं (विमानादि यान बनानेवालों के लिए—द०)। २. **कुलालेभ्यः**=मिट्टी के बर्तन बनानेवालों के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **वः**=आपके इन **कर्मारेभ्यः**=लोहारों (खड्ग, बन्दूक और तोप आदि शस्त्र बनानेवालों) का **नमः**=हम आदर करते हैं। ३. **निषादेभ्यः**=(मात्सिकाः—द०, गिरिचरा भिल्लाः—म०) मछियारों का या गिरिचर, गेंडे, शेर आदि के शिकारी भीलों का **नमः**=हम आदर करते हैं। (पर्वतादि में रहकर दुष्ट जीवों को ताड़ना देनेवालों के लिए—द०) **च**=और **वः**=आपके इन **पुञ्जिष्ठेभ्यः**=(पक्षिपुञ्ज-घातकाः पुल्कसादयः—म०) पक्षियों के शिकारियों का **नमः**=हम आदर करते हैं। कृषिरक्षा के लिए कितने ही पक्षियों का शिकार आवश्यक हो जाता है। ४. **श्वनिभ्यः**=(शुनो नयन्ति इति श्वगणिकाः—उ०) वराहादि के शिकार के लिए श्वगणों का, कुत्ते रखनेवालों का हम **नमः**=आदर करते हैं **च**=और **वः**=आपके इन **मृगयुभ्यः**=अन्य कृषि-विनाशक पशुओं का संहार करनेवालों के लिए **नमः**=हम आदर देते हैं।

भावार्थ—राष्ट्र के सब शिल्पकारों व शिकारियों का भी हम उचित मान करें।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्षीजगती। **स्वरः**—निषादः॥

भव-रुद्र

नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नमः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च ॥२८॥

१. राष्ट्र में शिकार व पहरे आदि में उपयोगी, चोरी आदि के अन्वेषण में पुलिस की मदद करनेवाले **श्वभ्यः**=कुत्तों को **नमः**=अन्नादि द्वारा उचितरूप से आदृत करते हैं, **च**=और **वः**=आपके इन **श्वपतिभ्यः**=कुत्तों (Dog squads) को शिक्षित करनेवालों को

नमः=हम आदर देते हैं। २. हम **नमः**=उस श्रेष्ठ गुण-सम्पन्न ब्राह्मण का भी आदर करते हैं जो **भवाय**=(शुभगुणादि-द०) सदा उत्तम गुणों में ही निवास करता है **च**=और **रुद्राय**=(रुत् दुःखं द्रावयति) दुःख को दूर भगानेवाला है। ३. उस ब्राह्मण का **नमः**=आदर करते हैं जो **शर्वाय**=(शृ हिंसायाम्) सब अशुभ वृत्तियों का संहार करनेवाला है **च**=तथा **पशुपतये**=(कामः पशुः, क्रोधः पशुः) काम, क्रोध आदि पाशव वृत्तियों को पूर्णरूप से अपने वश में रखता है, अथवा गवादि पशुओं का पालक है। ४. हम उस ब्राह्मण के लिए **नमः**=नमस्कार करते हैं जो **नीलग्रीवाय**=विविध विद्याओं से सुभूषित ग्रीवावाला है **च**=तथा **शितिकण्ठाय**=शुद्ध कण्ठ-स्वरवाला है। जो कभी अपशब्दों का प्रयोग न करता हुआ सदा शुद्ध शब्दों का ही प्रयोग करता है।

भावार्थ—हम राष्ट्र के उन ब्राह्मणों का आदर करते हैं जो सदा शुभ गुणों में निवास करनेवाले, ज्ञान देनेवाले, बुराइयों का संहार करनेवाले, काम-क्रोध को वशीभूत करनेवाले, विद्याविभूषित कण्ठवाले तथा शुद्ध कण्ठ स्वरवाले हैं।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्रः। **छन्दः**—भुरिगतिजगती। **स्वरः**—निषादः॥

ब्राह्मण-क्षत्रिय

नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशायय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च ॥२९॥

१. **कपर्दिने**=(क-पर-द्) सुख की पूर्ति को देनेवाले—ज्ञान-प्रचारक ब्राह्मण का **नमः**=हम आदर करते हैं **च**=और **व्युप्तकेशाय**=जिसने सब बालों को मुण्डित करा दिया है उस ज्ञान-प्रचारक संन्यासी का **नमः**=हम आदर करते हैं। २. **सहस्राक्षाय**=गुप्तचररूपी हज़ारों आँखोंवाले राजा का हम आदर करते हैं, **च**=और राष्ट्र-रक्षा के लिए **शतधन्वने च**=सैकड़ों धनुर्धारी पुरुषोंवाले इस राजा के लिए **नमः**=हम आदरभाव रखते हैं। ३. **गिरिशयाय**=वाणी में शयन करनेवाले ज्ञानी के लिए **च**=और **शिपिविष्टाय**='यज्ञो वै शिपिः'=यज्ञों में प्रविष्ट व्यक्ति के लिए, सदा यज्ञों में जीवन बितानेवाले का **नमः**=हम आदर करते हैं। 'ज्ञान प्राप्त करना, ज्ञान प्राप्त करके तदनुसार यज्ञादि उत्तम कर्मों को करना' ऐसा जीवन-सूत्र बनाकर चलनेवाले पुरुष का हम आदर करते हैं। ४. (क) रक्षा के द्वारा **मीढुष्टमाय**=अधिक-से-अधिक सुखों का सेचन करनेवाले राजपुरुष के लिए **च**=और **इषुमते**=रक्षा के लिए प्रशस्त बाणों को धारण करनेवाले पुरुष का **नमः**=हम आदर करते हैं। (ख) **मीढुष्टमाय**=वृक्षों के खूब सेचक माली आदि के लिए तथा बाणादि का धारण कर पहरा देनेवाले के लिए **नमः**=हम आदर करते हैं।

भावार्थ—ज्ञानी ब्राह्मणों का तथा रक्षक क्षत्रियों का सदा मान करना चाहिए।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—विराडार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

ह्रस्व-वामन

नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च ॥३०॥

१. उस **ह्रस्वाय**=छोटी उम्रवाले के लिए **च**=परन्तु **वामनाय**='वामं प्रशस्तं विज्ञानं विद्यते यस्य—द०' प्रशस्त विज्ञानवाले का **नमः**=हम आदर करते हैं अथवा छोटी उम्रवाले

और अतएव छोटे-छोटे अङ्गोंवाले को हम आदर देते हैं, उसे भी बीजरूप में व अंकुररूप में विद्यमान 'राष्ट्र का भावी उत्तम नागरिक' ही समझते हैं २. उस **बृहते**=प्रौढ़ अङ्गोंवाले के लिए **च**=और **वर्षीयसे**=अतिशयेन विद्या-वयोवृद्ध को **नमः**=हम आदर देते हैं। ३. **वृद्धाय च**=विद्या-विनयादि गुणों से बढ़े हुए के लिए **च**=और **सवृधे च**='समानैः सह वर्धते'=समान पुरुषों के साथ बढ़नेवाले का, अर्थात् मिलकर चलनेवाले का **नमः**=हम आदर करते हैं। ४. **अग्र्याय च**='अग्रे भवाय सत्कर्मसु पुरःसराय-द०' आगे होनेवाले के लिए, अर्थात् सत्कर्मों में सदा आगे चलनेवाले का **च**=और **प्रथमाय**=अपनी शक्तियों का विस्तार करनेवाले का **नमः**=हम आदर करते हैं। शक्तियों के विस्तार के कारण ही **प्रथमाय**=प्रसिद्ध (प्रख्याताय) को हम आदर देते हैं।

भावार्थ—आयु की दृष्टि से विविध स्थितियों में स्थित, राष्ट्र के अङ्गभूत सब व्यक्तियों का हम आदर करते हैं।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराडार्षीपङ्क्तिः। **स्वरः**—पञ्चमः॥

आशु-अजिर या नादेय-द्वीप्य

नमऽआशवे चाजिराय च नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नमऽऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ॥३१॥

१. **आशवे**='अश्नुते कर्मसु' कर्मों में व्याप्त होनेवाले के लिए **च**=और **अजिराय**='अज गतिक्षेपणयो' क्रियाशीलता के द्वारा विघ्नों को दूर फेंकनेवाले को **नमः**=हम आदर देते हैं। २. **शीघ्र्याय च**=(शिंघति व्याप्नोति कर्मसु)=शीघ्रता से कर्मों में व्याप्त होनेवाले के लिए **च**=और **शीभ्याय च**=(To tell, to say, to speak) कर्मों द्वारा अपनी शक्ति का प्रतिपादन करनेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। ३. **ऊर्म्याय** ='ऊर्मिषु भवाय' मन में उत्साह-तरङ्गों से युक्त के लिए **च**=और **अवस्वन्याय**='अर्वाचीनेषु स्वनेषु भवाय'=सदा नीचे स्वर में बोलनेवाले के लिए, अर्थात् उत्साहयुक्त होते हुए भी व्यर्थ में शोर न मचानेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं। ४. **नादेयाय**=नदियों में रहनेवाले के लिए, अर्थात् सदा सामुद्रिक व्यापारादि के कार्य में प्रवृत्त का हम **नमः**=आदर करते हैं **च**=और **द्वीप्याय**=जलान्तर्वर्ति प्रदेशों में रहकर कार्य करनेवालों के लिए हम आदर देते हैं।

भावार्थ—सदा राष्ट्र-हित के उद्देश्य से विविध संस्थानों में कार्यों में रत पुरुषों को हम आदृत करते हैं।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराडार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

छोटे-बड़े

नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च ॥३२॥

१. **ज्येष्ठाय**=अत्यन्त प्रशस्य ज्येष्ठ के लिए—आयुष्य के दृष्टिकोण से सबसे बड़े के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **कनिष्ठाय**=आयुष्य के दृष्टिकोण से छोटे के लिए युवा व अल्प के लिए नमस्कार हो। **पूर्वजाय**=सबसे प्रथम उत्पन्न हुए के लिए **च**=तथा **अपरजाय**=अपर काल में उत्पन्न हुए के लिए **नमः**=हम आदर का भाव रखते हैं। ३. **मध्यमाय**=पूर्वज व अपरज के मध्य में होनेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं,

च=और **अपगल्भाय**=(अपगतो गल्भो यस्मात्, गल्भः=व्युत्पन्नता धाष्ट्र्यम्) अव्युत्पन्नेन्द्रिय—सांसारिक बातों में अप्रवीण छोटे बच्चे का भी हम आदर करते हैं। ४. **जघन्याय च**=जघन=पश्चाद्भाग में होनेवाले के लिए, अर्थात् शूद्रादि के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **बुध्न्याय**=बिल्कुल मूल में होनेवाले—सबसे अन्तिम स्थानवाले अन्त्यजों का भी हम आदर करते हैं।

भावार्थ—राष्ट्र में उत्पन्न छोटे-बड़े तथा छोटे-बड़े कुलों में उत्पन्नों के लिए नमस्कार हो।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्राः

नमः सोभ्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नमऽउर्वर्याय च खल्याय च ॥३३॥

१. **सोभ्याय**=(उभाभ्यां सहितः सोभः तत्र साधुः) परा तथा अपरा-विद्या से युक्त पुरुषों में उत्तम ब्राह्मण के लिए **नमः**=हम नतमस्तक होते हैं। **च**=फिर **प्रतिसर्याय**=प्रत्येक उत्तम कर्म में गतिशील पुरुषों में उत्तम ब्राह्मण के लिए (प्रति+सर्+य) हम आदरवान् होते हैं। २. **याम्याय च**=प्रजाओं के नियमन करनेवालों में उत्तम क्षत्रिय का **नमः**=हम आदर करते हैं, **च**=और उस क्षत्रिय का आदर करते हैं जो **क्षेम्याय**=योग-क्षेम को उत्तमता से प्राप्त करानेवाला है, अर्थात् जिस क्षत्रिय के राष्ट्र में सभी का क्षेम चलता है, कोई भूखा नहीं मरता। ३. **श्लोक्याय नमः** (श्लोकः यशस्)=उस वैश्य के लिए हम नमस्कार करते हैं जो अन्नादि के वितरण के कारण अति यशस्वी बना है। वैश्य कमाता है, परन्तु सभी का पालन भी करता है। इस पालन से ही वैश्य का जीवन यशस्वी बनता है। **च**=और उस वैश्य को हम आदर देते हैं जो **अवसान्याय**=कर्मों को अवसान तक पहुँचाने में उत्तम हैं। ये स्वार्जित धन का ठीक प्रयोग करते हुए राष्ट्रहित के सभी कार्यों को पूर्णता तक पहुँचानेवाले होते हैं। धन के बिना किसी भी कार्य की पूर्ति सम्भव नहीं है। ४. **नमः**=हम राष्ट्र में उन शूद्रों का भी आदर करते हैं जो **उर्वर्याय**=(उर्वरायां भवः) सर्वसस्य से आढ्य भूमियों पर उन्हें हलादि से जोतने के लिए निवास करते हैं, तथा **खल्याय**=धान्य विवेचन-(छिलके से अलग करना)-देशों में कुटाई आदि द्वारा धान्य को छिलके से अलग करने में लगे हैं।

भावार्थ—हम सोभ्य व प्रतिसर्य ब्राह्मणों का आदर करें। याम्य-क्षेम्य क्षत्रियों का, श्लोक्य व अवसान्य वैश्यों का तथा उर्वर्य व खल्य शूद्रों का भी हम उचित आदर करें। जीविका के लिए किये गये किन्हीं भी शास्त्रीय कर्मों से कोई छोटा-बड़ा नहीं होता।

ऋषिः—प्रजापतिः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराडार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

श्रव-प्रतिश्रव राजा

नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नमऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च ॥३४॥

१. **वन्याय**=वन-प्रदेश में भी रक्षा की व्यवस्था करनेवाले राजा का **नमः**=हम आदर करते हैं **च** =और **कक्ष्याय**=झाड़ी-झंकाड़मय प्रदेशों में भी उत्तमता से रक्षा करनेवाले का

हम आदर करते हैं। २. **श्रवाय**=सबकी बात सुननेवाले राजा का **नमः**=हम आदर करते हैं **च**=और **प्रतिश्रवाय**=सबकी शिकायतों को दूर करने की प्रतिज्ञा करनेवाले राजा का हम **नमः**=आदर करते हैं ३. **आशुषेणाय** (आशुः शीघ्रा सेना यस्य)=शीघ्रता से मार्गों का व्यापन करनेवाली सेनावाले राजा का **नमः**=हम आदर करते हैं, **च**=और **आशुरथाय** =शीघ्रगामी रथवाले का हम आदर करते हैं। ४. उस राजा के लिए **नमः**=हम नतमस्तक होते हैं जो **शूराय**=शत्रुओं को शीर्ण करनेवाला है **च**=और **अवभेदिने**=शत्रुओं का अवभेदन करनेवाले का हम आदर करते हैं।

भावार्थ—हम उस राजा का आदर करें जो वनों व कक्ष-प्रदेशों का भी उत्तम रक्षक है, जो प्रजा की बात सुनता है और शिकायतों को दूर करता है। शीघ्रगामी सेनावाला और शत्रुओं का संहार करनेवाला है।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराडार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

क्षत्रिय

नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च ॥३५॥

१. **बिल्मिने च नमः**=(बिल्मं शिरस्त्राणमस्यास्तीति—म०) शिरस्त्राण (Helmet) को धारण किये हुए योद्धा को हम आदर देते हैं, **च**=और **कवचिने**=(पटस्यूतं कर्पासगर्भं देहरक्षकं कवचम्—म०) कपड़े के, रुई से भरे, सीये हुए देहरक्षक कवच को धारण करनेवाले के लिए हम नमस्कार करते हैं। (रुई में गोली उसी प्रकार धँस जाती है, जैसेकि मिट्टी में तोप का गोला)। २. **वर्मिणे च नमः**=लोहमय शरीररक्षक चर्म को धारण किये हुए सैनिक का हम आदर करते हैं, **च**=और **वरूथिने**=(वरूथ=रथगुप्ति) उत्तम रथ-गोपनवाले का भी हम आदर करते हैं। ३. **श्रुताय च**=अपने गुणों व विजयों के कारण प्रसिद्ध राजा का **नमः**=हम आदर करते हैं, **च**=और **श्रुतसेनाय**=अपनी वीरता व विजयों के कारण प्रसिद्ध सेनावाले का **नमः**=हम आदर करते हैं। ४. **दुन्दुभ्याय च**=और युद्ध के समय उत्तम दुन्दुभिवादक को **नमः**=हम आदर देते हैं, **च**=और **आहनन्याय**=उत्तम वादन-साधन दण्डादिवाले का भी हम आदर करते हैं। ये दुन्दुभि (drums) व आहनन-(drum-sticks)-वाले पुरुष युद्ध-वाद्य को बजाकर जहाँ शत्रुसैन्य को भयभीत करते हैं, 'दुन्दुशब्दने भावयति' दुन्दु शब्द से भयभीत करने से यह दुन्दुभि है, वहाँ यह 'आनक' शब्द स्वसैन्य को सोत्साह भी करता है, आनयति=उत्साहयति। युद्ध में इसी कारण इनका भी प्रमुख स्थान है। विजय का बहुत कुछ श्रेय इन्हें भी मिलता है।

भावार्थ—राष्ट्र की रक्षा करनेवाले क्षत्रियों का हमें उचित मान अवश्य करना चाहिए।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराडार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

शस्त्रास्त्र

नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च नमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्वायुधाय च सुधन्वने च ॥३६॥

१. **धृष्णवे च**=बाह्य शत्रुओं तथा अपने काम-क्रोधादि अन्तःशत्रुओं का धर्षण करनेवाले (धृष्णोतीति एवं शीलः) राजा के लिए **नमः**=हम आदर का भाव धारण करते हैं, **च**=और **प्रमृशाय**=(प्रमृशति विचारयति) सदा विचारशील राजा के लिए, कामादि से

प्रेरित न होकर विचारपूर्वक सन्धि-विग्रह आदि अपने कार्यों को करनेवाले के लिए हम सम्मान देते हैं। २. **निषङ्गिणे च**=तलवार धारण करनेवाले के लिए **नमः**=हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **इषुधिमते**=तीरों से भरे तरकसों को धारण करनेवाले का हम सत्कार करते हैं। ३. **तीक्ष्णेषवे च**=और तेज़ बाणोंवाले के लिए हम आदर देते हैं **च**=तथा **आयुधिने च**=अच्छे प्रकार तोप आदि से लड़नेवाले वीरों से युक्त अध्यक्ष पुरुष का भी हम मान करते हैं। ४. **स्वायुधाय च**=उत्तम आयुधों से युक्त (त्रिशूलधारी महादेव के समान प्रतीत होनेवाले) इन सैनिकों का **नमः**=हम आदर करते हैं, **च**=और **सुधन्वने**=उत्तम धनुष धारण किये हुए सैनिक का भी हम मान करते हैं।

भावार्थ—विविध शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित सैनिकों का हमें सदा सम्मान करना चाहिए और इनके मुखिया शत्रुधर्षक, विचारशील राजा को भी आदर के भाव से देखना चाहिए।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

जलाध्यक्ष

नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः काट्याय च नीप्याय च नमः कुल्याय च सरस्याय च नमो नादेयाय च वैशन्ताय च ॥३७॥

१. **स्रुत्याय च नमः**=स्रोतों—नाले आदि में नियुक्त पुरुष का हम आदर करते हैं **च**=और **पथ्याय च**=उन वारिप्रवाहों के साथ-साथ बने हुए मार्गों के शोधक पुरुष के लिए हम आदर देते हैं। २. **काट्याय च नमः**=कूप आदि में नियुक्त पुरुष का हम आदर करते हैं, **च**=और **नीप्याय**=(नीचैः पतन्त्यापो यत्र) बड़े गहरे जलाशयों में नियुक्त पुरुष का भी हम सम्मान करते हैं। ३. **कुल्याय च नमः**=नहरों का प्रबन्ध करनेवाले के लिए हम आदर देते हैं, **च**=और **सरस्याय**=तालाब (Tanks) आदि के काम में प्रसिद्ध होनेवाले के लिए हम मान का भाव धारण करते हैं। ४. **नादेयाय च नमः**=नदियों के विषय में नियुक्त पुरुष के लिए हम नमस्कार करते हैं, **च**=तथा **वैशन्ताय च**=छोटे-छोटे जोहड़ों—अल्पसरः (ponds) का ध्यान करनेवाले का हम सत्कार करते हैं।

भावार्थ—राष्ट्र में भिन्न-भिन्न स्थानों में नियुक्त जलाध्यक्षों का उचित आदर करना चाहिए। इनके कार्य की शुद्धि पर ही राष्ट्र में सारे क्षेत्रों की सिंचाई निर्भर है, अतः अन्नोत्पादन में इनका स्थान बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—भुरिगार्षीपङ्क्तिः। **स्वरः**—पञ्चमः॥

देश-भेद

नमः कूप्याय चावट्याय च नमो वीध्र्याय चातप्याय च नमो मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय चावर्ष्याय च ॥३८॥

१. **कूप्याय**=कूओं से सिंचाई करने योग्य देश के अध्यक्ष के लिए हम **नमः**=नमस्कार करते हैं, **च**=तथा **आवट्याय**=गर्तबहुल (अव=गड्ढा=गर्त) देश में कृषि की ठीक व्यवस्था करनेवाले पुरुष का **नमः**=हम आदर करते हैं। २. **वीध्र्याय च नमः**=(विगत इध्रो दीप्तिः यस्मात् स वीध्रो घनागमः) खूब बादलोंवाली वर्षाऋतु के प्राचुर्यवाली भूमि में नियुक्त पुरुष का हम आदर करते हैं, **च**=और **आतप्याय**=(आतपे भवः) खूब प्रचण्ड गरमीवाले प्रदेशों में नियुक्त पुरुष का भी हम मान करते हैं। ३. **मेघ्याय च नमः**=मेघोंवाले प्रदेश में नियुक्त

पुरुष का हम आदर करते हैं, **च**=और **विद्युत्याय च**=विद्युत् की विद्या में निपुण व विद्युत्-विभाग में नियुक्त पुरुष का हम आदर करते हैं। ४. **वर्ष्याय च नमः**=उत्तम वृष्टि की व्यवस्था करनेवाले के लिए या वृष्टिकाल में नियुक्त पुरुष का हम आदर करते हैं, **च**=और **अवर्ष्याय**=वर्षा के प्रतिबन्ध में निपुण पुरुष का हम आदर करते हैं।

भावार्थ—विविध देशों में नियुक्त राजपुरुषों के लिए हम उचित मान दें।

ऋषिः—कुत्सः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराडार्षीपङ्क्तिः। **स्वरः**—पञ्चमः॥

स्वभाव-भेद व कार्यभेद

नमो वात्याय च रेष्म्याय च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय च रुद्राय च नमस्ताम्राय चारुणाय च ॥३९॥

१. **वात्याय च नमः**=वायु-विद्या में कुशल अतएव वायु के रुख की सूचना देने के कार्य में नियुक्त मेटेरौलौजिकल विभाग के अध्यक्ष के लिए हम आदर देते हैं, **च**=और **रेष्म्याय**=(रिष हिंसायाम्) रेष्म में होनेवाले=डिस्ट्रक्शन के कार्य में नियुक्त स्लम क्लियरैन्स आदि कार्यों में नियुक्त व्यक्ति का भी हम आदर करते हैं। २. **वास्तव्याय च नमः**=गृहों में नियुक्त, अर्थात् गृहों के निर्माण में नियुक्त पुरुष का हम आदर करते हैं, **च**=और **वास्तुपाय**=निर्मित गृहों के रक्षण-कार्य में (मैण्टिनैन्स में) नियुक्त पुरुष के लिए भी हम सम्मान का भाव धारण करते हैं। ३. **सोमाय च नमः**=सोमादि ओषधियों के विज्ञान व प्रयोग में कुशल शरीरभूत औषध ही बने हुए वैद्य के लिए हम नतमस्तक होते हैं, **च**=और उन औषधों के द्वारा **रुद्राय**=(रुत् रोगं द्रावयति) रोगों को दूर भगानेवाले के लिए हम आदर देते हैं। ४. **ताम्राय च नमः**=ताम्र आदि धातुओं से निर्मित भस्मादि के प्रयोग में कुशल व्यक्ति का भी हम आदर करते हैं, **च**=और इन धातुओं के कुशल प्रयोग से **अरुणाय**=(प्रापकाय—द०) स्वास्थ्य को फिर से प्राप्त करानेवाले वैद्य के लिए हम आदर की भावनावाले होते हैं। ५. मन्त्र के उत्तरार्ध का अर्थ इस प्रकार भी हो सकता है कि **सोमाय**=सौम्य स्वभाववाले **रुद्राय**=ज्ञान देकर औरों के दुःखों को दूर करनेवाले का हम आदर करते हैं। हम उस पुरुष का आदर करते हैं जो **ताम्राय**=(ताम्यति ग्लायति) बुरे कर्मों के करने से ग्लानि करता है तथा **अरुणाय**=शुभ कर्मों को प्राप्त कराने के लिए प्रयत्नशील होता है।

भावार्थ—राष्ट्र के उत्थान में भिन्न-भिन्न कार्यों में लगे हुए सब व्यक्तियों का—विशेषतः रोगों को दूर करके प्रजा के जीवन को सुखी बनानेवाले औषध-विज्ञान के पण्डित व प्रयोग में कुशल वैद्यों का हम आदर करते हैं।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—अतिशक्वरी। **स्वरः**—पञ्चमः॥

शान्तेन्द्रिय-शत्रुहन्ता

नमः शङ्गवे च पशुपतये च नम उग्राय च भीमाय च नमोऽग्रेवधाय च दूरेवधाय च नमो हन्त्रे च हनीयसे च नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय ॥४०॥

१. **शङ्गवे च नमः**=(शं गावः यस्य, गावः=इन्द्रियाणि) शान्त इन्द्रियोंवाले व्यक्ति के लिए हम आदर देते हैं, **च**=और **पशुपतये**=(कामः पशुः, क्रोधः पशुः) काम, क्रोध आदि पाशववृत्तियों को पूर्णरूप से वशीभूत करनेवाले के प्रति हम सम्मान की भावना रखते

हैं। २. **उग्राय च नमः**=हम तेजस्वी पुरुष के लिए नमस्कार करते हैं, **च**=और **भीमाय**=जिससे शत्रु भयभीत होते हैं, उसका हम आदर करते हैं। ३. **अग्रेवधाय च नमः**=सेना के अग्रभाग में स्थित हुआ जो शत्रुओं का वध करता है, उसके लिए हम आदर देते हैं, **च**=और **दूरेवधाय**=(यो अरीन् दूरे बध्नाति–द०) शत्रुओं को दूर ही बाँधने व मारनेवाले के लिए हम नमस्कार करते हैं। ४. **हन्त्रे च नमः**=(यो दुष्टान् हन्ति तस्मै–द०) दुष्टों को नष्ट करनेवाले का हम आदर करते हैं, **च**=और **हनीयसे** (दुष्टानामतिशयेन हन्त्रे)=दुष्टों का अत्यन्त विनाश करनेवाले के लिए हम सम्मान का भाव रखते हैं। ५. **वृक्षेभ्यः नमः**=(ये शत्रून् वृश्चन्ति–द०) शत्रुओं को काट डालनेवालों के लिए हम आदर देते हैं, तथा शत्रुओं का सफ़ाया करके **हरिकेशेभ्यः**=(हरि क ईश) दुःखों के हरण व सुख-प्रापण के ईश पुरुषों को हम नमस्कार करते हैं। ६. **ताराय नमः**=(दुःखात् सन्तारकाय–द०) दुःखों से तरानेवाले सभी राष्ट्र-पुरुषों का हम मान करते हैं।

भावार्थ–'शान्तेन्द्रिय', 'वशीभूत काम-क्रोधादि वृत्ति' पुरुषों का आदर तो करना ही चाहिए साथ ही वीरतापूर्वक शत्रुओं का हनन करते हुए हमारे दुःखों को दूर करके सुखों के प्राप्त करानेवाले पुरुषों का भी हम आदर करें।

ऋषिः–परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**–रुद्राः। **छन्दः**–स्वराडार्षीबृहती। **स्वरः**–मध्यमः॥

शान्ति व सुख का राज्य Peace, (Plenty) Pleasure

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥४१॥

१. **शम्भवाय च नमः**=(शम्भावयति तस्मै परमेश्वराय सेनाध्यक्षाय वा–द०) राष्ट्र में सब उपद्रवों को शान्त करके शान्ति का स्थापन करनेवाले प्रभु व सेनापति का हम आदर करते हैं **च**=और **मयोभवाय**=(pleasure, delight, satisfaction) शत्रुओं के नाश के द्वारा सब सुखों का उत्पादन करनेवाले प्रभु व सेनापति का हम सम्मान करते हैं। २. **शङ्कराय च नमः**=(शं लौकिकं सुखं करोति–म०) शान्ति-स्थापन के द्वारा सब सांसारिक सुखों को देनेवाले राष्ट्र के मुख्य पुरुष का हम आदर करते हैं, **च**=और उन्नति का वातावरण प्राप्त कराके **मयस्कराय**=मोक्षसुख को प्राप्त करानेवाले के लिए हम सम्मान का भाव रखते हैं (मयः=मोक्षसुखं करोति–म०) ३. **शिवाय च नमः**=कल्याणरूप निष्पाप के लिए हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **शिवतराय च**=अत्यन्त कल्याणरूप के लिए हम मान देते हैं।

भावार्थ–राष्ट्र में 'शं, मयः व शिव'=शान्ति, सुख व कल्याण करनेवालों का हम मान करें।

ऋषिः–परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**–रुद्राः। **छन्दः**–निचृदार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**–धैवतः॥

पारोवर्यवित्

नमः पार्याय चावार्याय च नमः प्रतरणाय चोत्तरणाय च नमस्तीर्थ्याय च कूल्याय च नमः शष्प्याय च फेन्याय च ॥४२॥

१. **पार्याय च नमः**=(परायां साधु) पराविद्या, अर्थात् ब्रह्मविद्याओं में निपुण आचार्य का हम आदर करते हैं, **च**=और **अवार्याय**=(अवरायां साधु) अपराविद्या, अर्थात् प्रकृतिविद्या में निपुण आचार्य के लिए हमारा आदर हो। अपराविद्या से मनुष्य संसार-सागर के इस किनारे पर ही रहता है और पराविद्या से पार पहुँचता है २. **प्रतरणाय च नमः**=अपराविद्या

से मृत्यु को तैरने व तैरानेवाले का हम आदर करते हैं, **च**=और **उत्तरणाय**=पराविद्या के द्वारा संसारोत्तरण हेतु–संसार से तरानेवाले आचार्य को हम आदर देते हैं। ३. **तीर्थ्याय च नमः**=ज्ञानादि के द्वारा सब पापों से तरानेवाले तीर्थों में उत्तम आचार्य के लिए हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **कूल्याय च**=(कूल् To protect, to prevent) ज्ञान के द्वारा ही मानस विकारों से रक्षा करनेवालों तथा रोगों को शरीर में प्रवेश से रोकनेवालों में उत्तम इन 'कूल्य' आचार्यों के लिए हमारा आदर का भाव हो। ४. इन आचार्यों के 'पार्य व अवार्य' आदि बन पाने का रहस्य इस बात में है कि ये वनस्पति भोजन पर ही प्राणयात्रा करते हैं, अतः कहते हैं कि **शष्प्याय च नमः**=घास–तृण आदि, अर्थात् वानस्पतिक भोजन पर ही गुज़र करनेवालों का हम आदर करते हैं, **च**=और **फेन्याय**=फेनमय दुग्धादि का सेवन करनेवालों के लिए हमारा नमस्कार हो।

भावार्थ–पारोवर्यवित् आचार्यों का हम सदा मान करनेवाले बनें। हम भी इनकी भाँति वनस्पति व दुग्ध पर ही जीवन–निर्वाह करनेवाले हों।

ऋषिः–परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**–रुद्राः। **छन्दः**–जगती। **स्वरः**–निषादः॥

गृह आदि निर्माण

नमः सिकत्याय च प्रवाह्याय च नमः किंशिलाय च क्षयणाय च नमः कपर्दिने च पुलस्तये च नमऽइरिण्याय च प्रपथ्याय च ॥४३॥

१. **सिकत्याय च नमः**=(सिकतासु भवः) बालू (रेता) के विज्ञान को जाननेवाले का हम आदर करते हैं, **च**=और **प्रवाह्याय**=(प्रवाहे स्रोतसि भवः) जलधारा में बहकर आनेवाली मिट्टी, रेत आदि के विज्ञान में निपुण पुरुष का भी हम आदर करते हैं। २. **किंशिलाय च नमः**=(कुत्सिताः क्षुद्राः शिलाः शर्करारूपाः पाषाणाः तेषु भवः) पत्थर झुर–झुरकर बनी हुई बजरी के प्रयोग को समझनेवाले का हम आदर करते हैं, **च**=और **क्षयणाय**=(क्षियन्ति निवसन्त्यापो यत्र) 'जिनमें जलों का निवास सम्भव है' इस प्रकार के सीमैण्ट आदि के द्वारा गृह–निर्माण–कुशल पुरुष के लिए भी हम मान देते हैं। ३. **कपर्दिने च नमः**=कौड़ी, सीप, शंख आदि के अध्यक्ष के लिए हम आदर देते हैं, **च**=तथा **पुलस्तये**=बड़े–बड़े भारी पदार्थों को उठानेवाले यन्त्रों के निर्माता (महाकायक्षेप्त्रे–द०) के लिए भी हममें सम्मान का भाव हो। ४. **इरिण्याय च नमः**=(इरिणम् ऊषरम् तत्र भवः) ऊसर भूमियों के अधिकारी व विज्ञाता का हम आदर करें, **च**=तथा **प्रपथ्याय**=(प्रकृष्टः पन्थाः तत्र भवः) प्रकृष्ट मार्गों के निर्माता का भी हम मान करें।

भावार्थ–घरों के बनाने में प्रयुक्त होनेवाले रेता, मिट्टी, बजरी व सीमैण्ट आदि के विज्ञाता तथा शंखादि के प्रयोगकर्त्ता, भारवाहक यन्त्रों के निर्माता, ऊसर भूमि के प्रयोगज्ञ तथा बड़े–बड़े मार्गों के निर्माताओं का हम मान करें।

ऋषिः–परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**–रुद्राः। **छन्दः**–आर्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**–धैवतः॥

विविध कर्मकर

नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदय्याय च निवेष्याय च नमः काट्याय च गह्वरेष्ठाय च ॥४४॥

१. **व्रज्याय च नमः**=(व्रजे गोसमूहे भवः) गोचारण में कुशल पुरुष के लिए नमस्कार हो, **च**=और **गोष्ठ्याय**=गोशालाओं के अध्यक्ष के लिए आदर हो। २. **तल्प्याय**

च नमः=(तल्प शय्या) शयनागार के कर्मों में कुशल पुरुष के लिए आदर हो, उत्तम शय्यादि बनानेवाले का आदर हो, **च**=और **गेह्याय**=गृहकार्य में कुशल पुरुष के लिए भी आदर हो। ३. **हृदय्याय च नमः**=हृदय को प्रसन्न करनेवाले खिलौने आदि बनाने में कुशल पुरुष के लिए आदर हो, **च**=और **निवेष्याय**=उत्तम वेश (dresses) बनानेवाले का आदर हो। ४. **काट्याय च नमः**=कुओं के बनाने में कुशल पुरुष का आदर हो, **च**=और **गह्वरेष्ठाय**=कन्दराओं व गम्भीर जलाशयों के निर्माण में कुशल पुरुष का हम आदर करें। (गह्वरं गिरिगुहा, महदुदकं वा—उ०)।

भावार्थ—राष्ट्र में गडरिये से लेकर गम्भीर जलाशयों के निर्माता आदि मन्त्र-वर्णित सभी कर्मकरों का हम आदर करें, उन्हें तुच्छ न समझें।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

व्यापारी व कृषक

नमः शुष्क्याय च हरित्याय च नमः पाꣳसव्याय च रजस्याय च नमो लोप्याय चोलप्याय च नमऽऊर्व्याय च सूर्व्याय च ॥४५॥

१. **शुष्क्याय च नमः**=शुष्क पदार्थों (सूखे मेवों) के व्यापारी के लिए आदर हो, **च**=और **हरित्याय**=शाक आदि हरे पदार्थों के व्यापारी के लिए भी आदर हो। २. **पांसव्याय च नमः**=मिट्टी ढोनेवाले के लिए भी हम नमस्कार करते हैं, **च**=और **रजस्याय**=सूक्ष्म धूल का व्यापार करनेवाले का भी मान करते हैं। ३. **लोप्याय च नमः**=(लुप् छेदने) घास व लकड़ी आदि काटनेवाले के लिए आदर हो, **च**=और **उलप्याय**=(उलप=बल्वजादि तृणानि) तृण-विशेषों का संग्रह करनेवाले के लिए भी मान हो। ४. **ऊर्व्याय च नमः**=विशाल खेतों के स्वामियों का आदर हो (ऊर्व्या भूमौ भवः—म०) **च**=और **सूर्व्याय**=शोभन भूस्वामियों के लिए हमारा मान हो।

भावार्थ—राष्ट्र के सब व्यापारियों व कृषकों का हम आदर करें।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—स्वराट्प्रकृतिः। **स्वरः**—धैवतः॥

ओषधि-विक्रेता व काष्ठवाहक

नमः पर्णाय च पर्णशदाय च नमऽउद्गुरमाणाय चाभिघ्नते च नमऽआखिदते च प्रखिदते च नमऽइषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्च वो नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानाꣳहृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नमऽआनिर्हतेभ्यः ॥४६॥

१. **पर्णाय च नमः**=सोमादि ओषधियों के पत्तों के व्यापारी का आदर हो, **च**=और **पर्णशदाय**=इन पत्तों को काटकर लानेवाले के लिए आदर हो। २. **उद्गुरमाणाय**=काष्ठभार उठानेवाले के लिए सत्कार हो, **च**=और **अभिघ्नते**=काष्ठछेदक (wood cutter) के लिए आदर हो। ३. **आखिदते च नमः**=खेतों को चर जानेवाले पशुओं को खदेड़नेवालों, अर्थात् क्षेत्ररक्षकों का भी हम आदर करते हैं **च**=और **प्रखिदते च नमः**=तोते आदि पक्षियों के खदेड़ने (खिद=To strike) से बागों की रक्षा करनेवालों का हम आदर करते हैं। ४. **इषुकृद्भ्यः च नमः**=बाणों के बनानेवालों का हम आदर करते हैं, **च**=और **धनुष्कृद्भ्यः**=धनुष्

बनानेवालों का भी हम मान करते हैं। ५. **किरिकेभ्यः वः नमः**=(कुर्वन्ति इति–उ०) विविध वस्तुओं के निर्माता आप सबका हम आदर करते हैं। ६. **देवानां हृदयेभ्यः नमः**=देवताओं के हृदयवालों के लिए, अर्थात् जिनका हृदय आसुर भावनाओंवाला न होकर दैवी भावनाओं से भरा है उनके लिए हम नमस्कार करते हैं। ७. देव-हृदयवाला बनने के लिए **विचिन्वत्केभ्यः**= अपने हृदय में दैव व आसुर भावनाओं का विवेचन करनेवालों के लिए आदर हो। सदा हृदय की पड़ताल करनेवालों का हम सम्मान करें। ८. आसुर भावनाओं का **विक्षिणत्केभ्यः**= विशेषरूप से (क्षिण्वन्ति हिंसन्ति) हिंसन करनेवालों का आदर हो। ९. **आनिर्हतेभ्यः नमः** =(आ समन्तात् निर्हतं येषां) समन्तात् इन्द्रियाँ, मन व बुद्धि–सबमें से इन कामादि को दूर भगा देनेवालों का हम आदर करें। ७, ८, ९ की भावना बाह्य शत्रुओं के विषय में भी हो सकती है कि छिपे हुए शत्रुओं को ढूँढनेवालों, उनका हिंसन करनेवालों व समन्तात् दूर भगा देनेवालों का हम आदर करते हैं।

भावार्थ–ओषधि-विक्रेताओं, क्षेत्र-रक्षकों, शस्त्र-निर्माताओं तथा विविध शिल्पियों और निर्मल हृदयवाले, आत्म-निरीक्षण के अभ्यासियों का हम आदर करते हैं।

ऋषिः–परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**–रुद्राः। **छन्दः**–भुरिगार्षीबृहती। **स्वरः**–मध्यमः॥

दरिद्र : आदर्श राजा

द्रापे॒ऽअन्ध॑सस्पते॒ दरि॑द्र॒ नील॑लोहित।
आ॒सां प्र॒जाना॒मे॒षां प॑शू॒नां मा भे॒र्मा रो॒ङ् मो च॑ न॒: किं च॒नाम॑मत्॥४७॥

१. गत मन्त्र में राष्ट्र के सब अधिकारियों व अन्य कर्मकरों का उल्लेख करके कहते हैं कि **द्रापे**=(द्रा कुत्सायां गतौ, तस्याः पाति) कुत्सित गति से सबकी रक्षा करनेवाले! वस्तुतः राजा का मौलिक कर्त्तव्य यही है कि वह सभी को स्वधर्म में स्थापित करे और कुत्सित आचरण से बचाये। २. **अन्धसस्पते**=(क) हे अन्नों के पति! (अन्धस्=अन्न) राजा का दूसरा कर्त्तव्य यह है कि राजा राष्ट्र में किसी को भूखा न मरने दे ('नास्य विषये क्षुधा अवसीदेत्'–आपस्तम्ब)। धान्यों के अष्टम भाग को कर रूप में लेनेवाला राजा अन्नों का स्वामी तो बनता ही है। अचानक वृष्ट्यभाव में अन्न की कम उत्पत्ति होने पर राजा के वे अन्नकोश प्रजा के अन्नाभाव के कष्ट को दूर करनेवाले होते हैं। (ख) 'अन्धसस्पते' का अर्थ 'सोमपते' भी है (अन्धस्=सोम)=राजा अपने **सोम**=वीर्य-शक्ति की रक्षा करनेवाला हो। स्वयं संयमी राजा ही औरों का भी संयमन कर पाता है। ३. **दरिद्र**=निष्परिग्रह! राजा का यह सम्बोधन स्पष्ट कर रहा है कि राजा को प्रजा से कर प्रजा के कल्याण के लिए ही लेना है। उस कर का विनियोग उसे अपने लिए नहीं करना है। 'प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्'='प्रजाओं के ही कल्याण के लिए वह उनसे कर लेता था– यह राजा के जीवन का आदर्श होना चाहिए।' सारे कोश का स्वामी होते हुए भी राजा स्वयं निष्परिग्रह ही बना रहे। यह कोशरूप धेनु प्रजा के लिए धेनु=दूध पिलानेवाली हो, राजा के लिए तो यह 'वशा' बाँझ गौ ही हो। ४. **नीललोहित** =(कण्ठे नीलः, अन्यत्र लोहितः–म०) कण्ठ में नील हो, अर्थात् विविध विद्याओं से विभूषित कण्ठवाला हो और शरीर में अत्यन्त तेजस्वी हो। एवं, ब्रह्म व क्षत्र के उचित विकासवाला हो। ५. हे राजन्! तू ऐसी व्यवस्था कर कि **आसां प्रजानाम्**=इन प्रजाओं में से तथा **एषां पशूनाम्**=इन पशुओं में से **मा भेः**=कोई भयभीत न हो। सब प्रजाओं व पशुओं का सारे राष्ट्र में अकुतोभय सञ्चार हो।

मार्गों में व अन्धकार के समय चोर-डाकुओं आदि का ख़तरा न हो। ६. **मा रोक्**=(रुजो भङ्गे) इनका किसी प्रकार का भङ्ग न हो। ऐसी उत्तम व्यवस्था कर कि न्यायमार्ग पर चलनेवाले किसी का भी कार्य असफल न हो। ७. **उ**=और **च**=फिर **नः**=हममें से **किंचन**=कोई भी **मा आममत्**=रोगी न हो (अम रोगे)। एवं, राजा तीन व्यवस्थाएँ अवश्य शीघ्रातिशीघ्र करे (क) सब निर्भीक होकर आवागमन कर सकें, न्याय्यकार्यों में असफलताएँ न हों तथा रोग न फैलें।

भावार्थ—राजा 'द्रापि-अन्धसस्पति-दरिद्र व नीललोहित' हो और उसकी व्यवस्था इतनी उत्तम हो कि किसी को मार्गों में भय न हो, असफलताएँ न हों और रोग न फैलें।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्षीजगती। **स्वरः**—निषादः॥

शम्-पुष्टम्-अनातुरम्

इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्र भरामहे मतीः।
यथा शमसद् द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम्॥४८॥

१. **रुद्राय**=(रुत् ज्ञानं राति, रुतं दुःखं द्रावयति) ज्ञान देनेवाले—सारे राष्ट्र में ज्ञान का प्रसार करनेवाले और प्रजा के दुःखों को दूर करनेवाले राजा के लिए, २. **तवसे**=महान् व बलवान् राजा के लिए (तवस्—महान्=बलवान्) अथवा (तु To thrive) राष्ट्र की सर्वतोमुखी वृद्धि करनेवाले राजा के लिए। ३. **कपर्दिने**=प्रजाओं के लिए (क) सुख की (ख) परं=पूर्ति को (ग) देनेवाले राजा के लिए। राजा को चाहिए कि वह सदा अपनी उत्तम राष्ट्र-व्यवस्था से सभी के कष्टों को दूर करके उनके जीवन को सुखी बनाये। ४. **क्षयद्वीराय**=(क्षयन्तो वीरा यस्मिन्) जिसके समीप वीर पुरुषों का निवास है, अर्थात् जिस राजा की सेना वीरपुरुषों से परिपूर्ण है, उस राजा के लिए हम **मतीः**=(याभिः मन्यते स्तूयते) इन स्तुतियों व बुद्धियों को **प्र भरामहे**=प्रकर्षेण प्राप्त कराते हैं। ५. **यथा**=जिससे इस राजा के द्वारा बुद्धिपूर्वक की गई व्यवस्था से **द्विपदे चतुष्पदे**=दोपायों व चौपायों—मनुष्यों व पशुओं सभी के लिए **शम्**=शान्ति व सुख **असत्**=हो ६. **अस्मिन् ग्रामे**=इन राष्ट्र के नगरों में **विश्वम्**=सब कोई **पुष्टम्**=समृद्ध (possession वाला) हो और साथ ही **अनातुरम्**=आपद्रहित, स्वस्थ हो।

भावार्थ—राजा 'रुद्र, तवस्, कपर्दी व क्षयद्वीर' हो। उसकी उत्तम व्यवस्था से सब शान्त, समृद्ध व नीरोग जीवनवाले हों (शम्-पुष्टं-अनातुरम्)।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

शिवा तनूः

या ते रुद्र शिवा तनूः शिवा विश्वाहा भेषजी।
शिवा रुतस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे॥४९॥

१. हे **रुद्र**=राष्ट्र के दुःखों को दूर करनेवाले राजन्! **या**=जो **ते**=तेरी **शिवा**=कल्याणकर **तनूः**=विस्तृत राजनीति है (द०) वह **शिवा**=सचमुच कल्याणकर हो। २. **विश्वाहा**=सदा **भेषजी**=कष्टों की औषधरूप हो, अर्थात् सब कष्टों को दूर करनेवाली हो। ३. **शिवा**=वह कल्याणकर नीति **रुतस्य**=रोगों की **भेषजी**=औषध हो, सब रोगों को दूर करनेवाली हो। ४. **तया**=अपनी उस नीति से **नः**=हमें **मृड**=सुखी कीजिए तथा ५. **जीवसे**=हमारे दीर्घ जीवन

का कारण बनो।

भावार्थ—राजा की राजनीति ऐसी सुन्दर हो कि उससे १. प्रजा के कष्ट दूर हों। ३. वह कल्याणकर होती हुई सब रोगों को दूर करनेवाली हो। २. उससे प्रजा के जीवन सुखी हों। ४. प्रजा दीर्घजीवी बने।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्षीत्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

दण्ड व अपराध-शून्यता

परि॑ नो रु॒द्रस्य॑ हे॒तिर्वृ॑णक्तु॒ परि॑ त्वे॒षस्य॑ दु॒र्म॒तिर॑घा॒योः।
अव॑ स्थि॒रा म॒घव॑द्भ्यस्तनुष्व॒ मीढ्व॑स्तो॒काय॒ तन॑याय मृड ॥५०॥

१. **नः**=हमें **रुद्रस्य**=अन्यायकारियों को रुलानेवाले (रोदयति) राजा का **हेतिः**=अस्त्र **परिवृणक्तु**=छोड़ दे। हमपर दण्ड देनेवाले राजा का वज्र न गिरे, अर्थात् हम राजनियमों का पालन करते हुए राजा के प्रकोप से बचे रहें। २. और इस राजा की उचित व्यवस्था से हमें **त्वेषस्य**=(त्वेषति क्रोधेन ज्वलति, red with anger) क्रोध की ज्वाला से तमतमाते हुए **अघायोः** (अघं परस्य इच्छति)=सदा औरों का अशुभ चाहनेवाले अघायु पुरुष की **दुर्मतिः**=बुरी बुद्धि **परि**=(वृणक्तु) छोड़ दे। हम उसकी बुरी बुद्धि का शिकार न हो जाएँ, अर्थात् उत्तम राष्ट्र-व्यवस्था के परिणामस्वरूप दुष्ट लोग सज्जनों को पीड़ित न कर पाएँ। ३. **स्थिरा**=अपने दृढ़ शस्त्रों को तू **मघवद्भ्यः**=(मघ=मख) यज्ञशील जीवनवालों के लिए **अवतनुष्व**=शिथिल कर दे—धनुष की डोरी को उतार दे। ४. **मीढ्वः**=हे सब सुखों की वर्षा करनेवाले राजन्! तू **तोकाय**=हमारी सन्तानों के लिए तथा **तनयाय**=सन्तानों की भी सन्तानों के लिए **मृड**=सुख देनेवाला हो।

भावार्थ—राजा राष्ट्र में ऐसी उत्तम दण्ड-व्यवस्था करे कि दुर्जन सज्जनों को तङ्ग न कर सकें। यज्ञशीलों पर दण्डपात न हो।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्षीयवमध्यात्रिष्टुप्। **स्वरः**—धैवतः॥

वृक्ष पर आयुधस्थापन

मीढु॑ष्टम॒ शिव॑तम॒ शिवो॑ नः सु॒मना॑ भव। प॒र॒मे वृ॒क्षऽआयु॑धं नि॒धाय॒ कृत्तिं॒ वसा॑न॒ऽआ च॑र॒ पिना॑क॒म्बिभ्र॒दा ग॑हि ॥५१॥

१. **मीढुष्टम**=अतिशयेन मीढ्वान्=सर्वाधिक सुखों का सेचन करनेवाले **शिवतम**=अधिक-से-अधिक कल्याण करनेवाले राजन्! **नः**=हमारे लिए **शिवः**=कल्याण करनेवाले **सुमनाः**=उत्तम मनवाले **भव**=होओ। राजा का मन सदा प्रजा के हित की कामनावाला हो तथा उसके सारे प्रयत्न प्रजा को सुखी बनाने के लिए हों। २. **परमे**=अत्यन्त प्रबल **वृक्षे**=(व्रश्चनीये छेदनीये शत्रुसैन्ये—द०) काटने योग्य शत्रुसैन्य पर **आयुधं निधाय**=खड्ग, भुशुण्डी और शतघ्नी आदि शस्त्रों को रखकर, अर्थात् इन आयुधों का शत्रुओं पर प्रयोग करते हुए, ३. **कृत्तिं वसानः**=छेदनक्रिया को धारण करता हुआ, अर्थात् शत्रुओं पर प्रयोग करता हुआ तू **आचर**=समन्तात् विचरण कर। ४. राष्ट्र की रक्षा के लिए **पिनाकम्**=(पाति रक्षति आत्मानं येन तद्धनुर्वर्मादिकम्—द०) रक्षा के साधनभूत धनुष को **बिभ्रत**=धारण किये हुए **आगहि**=तू आ।

भावार्थ—राजा ने प्रजा पर सुखों की वर्षा करनी है—प्रजा का कल्याण सिद्ध करना है। शत्रुओं पर शस्त्र-प्रयोग द्वारा उनका छेदन करते हुए प्रजा के रक्षण के लिए धनुर्धर

बनकर विचरना है।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

दण्ड

विकिरिद्र विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः।
यास्ते सहस्रꣳहेतयोऽन्यमस्मन्नि वपन्तु ताः॥५२॥

१. **विकिरिद्र**=(विकिरन् इषून् द्रावयति इति—उ०) बाणों की विशिष्ट वर्षा के द्वारा शत्रुओं को भगानेवाले राजन्! २. **विलोहित**=विशिष्टरूप से प्रवृद्ध शक्तियोंवाले व विशिष्ट तेजवाले राजन्! ३. **भगव** =ऐश्वर्य व शक्ति आदि भगों से युक्त राजन्! ते **नमः अस्तु**=हम तेरे लिए नमस्कार करते हैं। ४. हे राजन्! **याः**=जो **ते**=आपके **सहस्रं हेतयः**=हज़ारों अस्त्र व वज्र हैं **ताः**=वे **अस्मत् अन्यः**=हमसे भिन्न व्यक्ति को **निवपन्तु**=छिन्न करनेवाले हों, अर्थात् आपके अस्त्र नियमानुकूल चलनेवाले हम लोगों से भिन्न लोगों को ही नष्ट करनेवाले हों। आपका दण्ड दण्डनीय पुरुषों को ही दण्डित करनेवाला हो। वह दण्ड असमीक्ष्य प्रणीत होकर प्रजाओं के उद्वेग का कारण न बन जाए।

भावार्थ—राजा विचार करके दण्ड को दण्ड्यों पर ही डाले, जिससे वह दण्ड सारी प्रजाओं के रञ्जन का कारण बने।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

सहस्राणि सहस्रशः

सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः।
तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि॥५३॥

१. हे **भगवः**=समग्र ऐश्वर्य-सम्पन्न राजन्! **तव बाह्वोः**=आपकी भुजाओं में **सहस्राणि**=हज़ारों प्रकार के **सहस्रशः**=संख्या में हज़ारों **हेतयः**=हनन-साधन शस्त्र हैं। २. **तासाम् ईशानः**=उनके पूर्ण प्रभु होते हुए, अर्थात् उनके चलाने व रोकने में पूर्ण अभ्यस्त होते हुए आप **तासाम्**=उन शस्त्रों के **मुखा**=मुखों को **पराचीना**=हमसे दूसरी ओर गया हुआ, अर्थात् हमसे विपरीत दिशा में **कृधि**=कर दीजिए। अपनी तोपों का मुख हमसे दूर दूसरी ओर कर दीजिए। आपके ये अस्त्र आपकी प्रजा को ही न भूनने लगें। ३. (क) ये अस्त्र प्रकारों के दृष्टिकोण से सहस्रों हैं, और प्रत्येक संख्या में हज़ारों में है। (ख) राजा व राजपुरुष इन अस्त्रों के प्रयोग में पूर्ण निपुण हैं। (ग) इन अस्त्रों का प्रयोग वे शत्रुओं पर ही करते हैं, अपनी प्रजा पर नहीं।

भावार्थ—शतशः शस्त्रों के प्रयोग में निपुण राजा शत्रुओं पर ही शस्त्र-प्रयोग करता है, उसके शस्त्र प्रजापीड़न का कारण नहीं बनते।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—विराडार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

अधि भूम्याम्

असंख्याता सहस्राणि ये रुद्राऽअधि भूम्याम्।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥५४॥

१. राष्ट्र में राजपुरुषों की नियुक्ति की कोई निश्चित संख्या नहीं है। राष्ट्र छोटा होगा

तो राजपुरुषों की संख्या भी थोड़ी होगी। राष्ट्र के बड़े होने पर यह संख्या भी बड़ी हो जाती है, अतः मन्त्र में कहते हैं कि **ये रुद्राः**=(रुत् दुःखं द्रावयन्ति) जो प्रजा के कष्टों को दूर भगाने में नियुक्त राजपुरुष हैं, (क) **असंख्याता**=जिनकी कोई संख्या निश्चित नहीं है जो (ख) **सहस्राणि**=हज़ारों ही हैं तथा (स हस्) प्रसन्न मनोवृत्तिवाले हैं, सड़ियल मिज़ाज़ के नहीं है, (ग) **अधि भूम्याम्**=(भूमि=पृथिवी शरीरम्) शरीर पर पूर्ण आधिपत्य रखते हैं, जिन्होंने शारीरिक उन्नति अधिक की है। २. **तेषाम्**=उन रुद्रों के **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्र-योजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=सुदूर विस्तृत करते हैं। ३. अभिप्राय यह कि राष्ट्र-रक्षा में विनियुक्त राजपुरुषों को शरीर के दृष्टिकोण से पूर्ण होना चाहिए तथा वे शस्त्रास्त्र की विद्या में निपुण बनकर दूर-दूर तक अस्त्रों का प्रयोग करनेवाले हों।

भावार्थ—राजपुरुष १. स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से शरीर के पूर्ण प्रभु हों, तथा २. अस्त्र-चालन-विद्या में निपुण हों।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—भुरिगार्ष्युष्णिक्। **स्वरः**—ऋषभः॥

अधि अन्तरिक्षे

अस्मिन् महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवाऽअधि।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥५५॥

१. हे **भवाः**=(भवति अस्मिन्) जिनके रक्षाकार्य में ही राष्ट्र की स्थिति सम्भव है वे राजपुरुष, जो **अस्मिन्**=इस **महति**=विशाल **अर्णवे**=दया के जलवाले **अन्तरिक्षे अधि**=हृदयान्तरिक्ष पर पूर्ण आधिपत्य रखते हैं, अर्थात् (क) जिनका हृदय विशाल है। (ख) दुःखियों को देखकर जिनका हृदय दयार्द्र हो उठता है। (ग) जिनके हृदय में वासनाओं के तूफ़ान नहीं उठते, जो सदा मध्यमार्ग में चलते हैं। २. **तेषाम्**=उनके **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=सुदूर विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राजपुरुष १. हृदय के दृष्टिकोण से सदा मध्यमार्ग पर चलनेवाले हों। २. और अस्त्र-विद्या में पारङ्गत हो।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—बहुरुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

दिवं श्रिताः

नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवꣳरुद्राऽउपश्रिताः।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥५६॥

१. जो **रुद्राः**=दुःखद्रावक राजपुरुष **नीलग्रीवाः**=विविध विद्याओं से सुभूषित ग्रीवावाले हैं। २. **शितिकण्ठाः**=(शितिः श्वेत=शुद्ध) शुद्ध कण्ठ स्वरवाले हैं। ३. **दिवं उपश्रिताः**=ज्ञान के प्रकाश को जिन्होंने समीपता से सेवन किया है, अर्थात् खूब ऊँचे ज्ञानी बने हैं। ४. **तेषाम्**=उनके **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राजपुरुष १. मस्तिष्क के दृष्टिकोण से विविध विद्याओं से सुभूषित, खूब ज्ञानी हों। इनका कण्ठस्वर भी बड़ा शुद्ध हो। २. अस्त्र-विद्या के पारङ्गत तो हों ही।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

अधः क्षमाचराः

नीलग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वाऽअधः क्षमाचराः।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥५७॥

१. **नीलग्रीवाः**=विविध विद्याओं से सुभूषित गर्दनवाले, २. **शितिकण्ठाः**=शुद्ध कण्ठस्वर-वाले, ३. **शर्वाः**=(शृणन्ति) शत्रुओं का संहार करनेवाले रुद्र, अर्थात् राजपुरुष, ४. **अधः**=सर्वदा अधोदृष्टिवाले, अर्थात् अपनी शक्ति आदि का गर्व न करनेवाले, सदा ५. **क्षमाचराः**=सहनशक्ति के साथ विचरनेवाले हैं, प्रजा से मूर्खतावश दी गई गालियों से उत्तेजना में नहीं आ जाते। ६. **तेषाम्**=उनके **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राजपुरुष १. उद्धत न होकर विनीत हो। २. प्रजा की गालियों से तैश में न आनेवाले हों।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

शष्पिञ्जराः (उत्प्लुत बन्धनवाले)

ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥५८॥

१. **ये**=जो **वृक्षेषु**=(व्रश्चनीय छेदनीय) छेदन के योग्य काम, क्रोध व लोभ आदि शत्रुओं के विषय में **शष्पिञ्जराः**=(शड् उत्प्लुतं बन्धनं पिञ्जरं येन) बन्धन से ऊपर उठ गये हैं, अर्थात् कामादि के बन्धन से जो ऊपर उठ गये हैं २. **नीलग्रीवाः**=विविध विद्याओं से सुभूषित कण्ठवाले हैं। ३. **विलोहिताः**=विशिष्ट रूप से उन्नति को प्राप्त (रोहित) अथवा तेजस्वी हैं। ४. **तेषाम्**=इन रुद्रों के **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=सहस्रों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=विस्तृत करते हैं। ५. रुद्रों=अर्थात् प्रजा के दुःखद्रावण में विनियुक्त पुरुषों को चाहिए कि वे (क) इन छेदनीय कामादि शत्रुओं के बन्धन से ऊपर उठे हुए हों, (ख) विद्या-विभूषित कण्ठवाले हों। (ग) तेजस्वी हों तथा (घ) दूर-दूर तक अस्त्रों के प्रयोग में निपुण हों।

भावार्थ—राजपुरुष विषयों के बन्धनों को परे फेंक चुके हों।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—आर्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

विशिखासः (विशिष्ट ज्ञान की ज्वालावाले)

ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥५९॥

१. **ये**=जो **भूतानाम् अधिपतयः**=शरीर के अङ्गभूत 'पृथिवी, जल, तेज, वायु व आकाश' इन पाँचों भूतों के अधिपति हैं, अर्थात् इन्हें जिन्होंने पूर्णतया अपने अनुकूल बनाया है, अर्थात् जो पूर्ण स्वस्थ हैं २. **विशिखासः**=(शिखा=ज्वाला) विशिष्ट ज्ञान की ज्योतिवाले हैं ३. **कपर्दिनः**=प्रजाओं के लिए सुख की पूर्ति करनेवाले हैं, अर्थात् विशिष्ट व्यवस्थाओं के द्वारा प्रजा के जीवन को सुखी बनानेवाले हैं। ४. **तेषाम्**=उन रुद्रों के—प्रजा के दुःखों का द्रावण करनेवाले राजपुरुषों के **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=सुदूर विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राजपुरुषों को (क) पूर्ण स्वस्थ होना चाहिए, (ख) ज्ञान की ज्योतिवाला होना चाहिए तथा (ग) उनका ध्येय प्रजा के जीवन को सुखी करना हो (कपर्दिनः)।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

पथिरक्षयः (मर्यादा-पालक)

ये पथां पथिरक्षयऽऐलबृदाऽआयुर्युधः।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥६०॥

१. **ये**=जो **पथां पथिरक्षयः**=मार्गों के रक्षक हैं, लौकिक व वैदिक मार्गों का अपने जीवन में पालन करते हैं तथा सुशासन से प्रजाओं के जीवन में भी मर्यादाओं को लुप्त नहीं होने देते। राजा का मुख्य कार्य यही है कि 'राजा चतुरो वर्णान् स्वधर्मे स्थापयेत'=वह सब वर्णों को स्वधर्म में स्थापित करे। २. **ऐलबृदाः** =(ऐलभृतः—म०) (इलानां अन्नानां समूह ऐलम्)=अन्नसमूह का ये धारण करनेवाले हैं। (ऐले बिभ्रति) राष्ट्र में अन्न की कमी नहीं होने देते। घर में पति-पत्नी का पहला क़दम यही होता है कि 'अन्न की कमी न हो' (इषे एकपदी भव) इसी प्रकार राष्ट्र में राजा का सर्वप्रथम यह प्रयत्न होना चाहिए कि राष्ट्र में अन्न की कमी न हो जाए। लोग भूख से न कराह उठें। ३. **आयुर्युधः**=ये (आयुर्जीवनं पणीकृत्य युध्यन्ते) राष्ट्र की उन्नति के लिए विरोधी तत्त्वों व विघ्नों के साथ युद्ध में अपने प्राणों की बाज़ी लगा दें, अर्थात् प्राणपन से राष्ट्रोन्नति में लगे रहें। ४. **तेषाम्**=इन रुद्रों=प्रजा-दुःखद्रावक राजपुरुषों के **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राजपुरुष १. मार्ग-रक्षक (मर्यादा-पालक) हों, २. अन्न के धारण करनेवाले—अन्न की कमी न होने देनेवाले हों ३. प्राणपन से राष्ट्रोन्नति में लगे हुए हों।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृदार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

तीर्थ-प्रचरण (आचार्योपासन)

ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥६१॥

१. **ये**=जो **तीर्थानि**=अविद्यादि से तरानेवाले (तारयन्ति—द०) आचार्यों का **प्रचरन्ति**=उपासन करते हैं, आचार्य-चरणों में पहुँचकर सदा उत्तम उपदेश लेते रहते हैं। २. **सृकाहस्ता**=(सृका=आयुधम्) हाथों में आयुधों का ग्रहण करनेवाले, ३. **निषङ्गिणः**=प्रशस्त तलवारोंवाले हैं। ४. **तेषाम्**=उन प्रजा-दुःखद्रावक रुद्रों=राष्ट्रपुरुषों के **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों कोसों की दूरी तक **अवतन्मसि** =विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राष्ट्र के रक्षापुरुष (क) आचार्य-चरणों में उपस्थित होकर अपने कर्त्तव्य को सदा समझनेवाले हों, विद्या-वयोवृद्धों के ये उपासक हों। (ख) रक्षा के लिए अस्त्रों के धारण करनेवाले हों।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—विराडार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

खान-पान के विषय में प्रेरणा (स्वास्थ्य विभाग)

येऽअन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान्।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥६२॥

१. **ये**=जो **अन्नेषु**=अन्नों के विषयों में **विविध्यन्ति**=(विध्=To administer, govern)

विविध निर्देश देते हैं तथा २. **पात्रेषु**=पात्रों में **पिबतः**=दुग्ध, लस्सी आदि पीते हुए **जनान्**=लोगों को **विविध्यन्ति**=विशेषरूप से शासित करते हैं कि 'इस प्रकार के पेय के लिए इन पात्रों का प्रयोग करना है और इनका नहीं' (लस्सी के लिए बिना कलईवाले पात्र का प्रयोग नहीं करना)। ३. **तेषाम्**=उन रुद्रों के, प्रजा के रोगों को दूर करनेवाले राजपुरुषों के **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=विस्तृत करते हैं।

भावार्थ—राजपुरुषों को प्रजा के अन्दर 'खान-पान' के नियमों का भी विशेषरूप से अनुशासन करना है, जिससे सब प्रजाएँ नीरोग होकर सुखी हो सकें।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—भुरिगार्ष्यनुष्टुप्। **स्वरः**—गान्धारः॥

एतावन्तः—भूयांसः

यऽएतावन्तश्च भूयाꣳसश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे।
तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि॥६३॥

१. **ये**=जो **एतावन्तः च**=इतने, जिनका कि ऊपर मन्त्रों में उल्लेख किया गया है, **च**=अथवा **भूयांसः**=और भी जिनका स्पष्ट उल्लेख नहीं हुआ—वे सबके सब **रुद्राः**=प्रजा-दुःखद्रावक राजपुरुष जोकि **दिशः वितस्थिरे**=भिन्न-भिन्न दिशाओं में अपने-अपने नियुक्ति स्थानों में स्थित हैं। २. **तेषाम्**=उन सबके **धन्वानि**=अस्त्रों को **सहस्रयोजने**=हज़ारों योजनों की दूरी तक **अवतन्मसि**=हम सुदूर विस्तृत करते हैं, इनके दूर-दूर तक शत्रुओं का संहार करनेवाले अस्त्र प्रजा-रक्षण व प्रजा के सुख-वर्धन का साधन बनते हैं।

भावार्थ—सब राजपुरुषों का एक ही ध्येय होना चाहिए कि शस्त्र-प्रयोग के नैपुण्य से शत्रुओं का शातन (नाश) करके प्रजा के दुःखों को दूर करें और उसके सुख का वर्धन करें। इसी में 'रुद्र' नाम की सार्थकता है।

सूचना—'एतावन्तः भूयांसः' शब्द स्पष्ट संकेत कर रहे हैं कि राजपुरुषों की संख्या कार्यानुसार बढ़ सकती है।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—निचृद्धृतिः। **स्वरः**—ऋषभः॥

ये दिवि येषां वर्षम् इषवः

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दशो दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥६४॥

१. **रुद्रेभ्यः नमः अस्तु**=रुद्रों के लिए, राजा की ओर से नियुक्त (रुत्=ज्ञानं राति=ददति) ज्ञान देनेवाले पुरुषों के लिए नमस्कार हो। उन रुद्रों के लिए **ये**=जो **दिवि**=(दिव=प्रकाश) प्रकाश फैलाने के कार्य में नियुक्त हैं, जिन्होंने **दिवि**=प्रकाश के क्षेत्र में द्युलोक व मस्तिष्क पर पूर्ण आधिपत्य प्राप्त किया है। २. **वर्षम्**=ज्ञान की वर्षा ही **येषाम्**=जिनके **इषवः**=बाण हैं, अर्थात् जो ज्ञान की वर्षा के द्वारा लोगों के दुःखों को दूर करने में लगे हैं। ३. **तेभ्यः**=इन ज्ञानवर्षणरूप बाणोंवाले रुद्रों के लिए **दश**=दस **प्राचीः**=पूर्वाभिमुख, पूर्व की ओर अंगुलियों को करता हूँ, अर्थात् बद्धाञ्जलि होकर प्रणाम करता हूँ। **दश दक्षिणाः**=इसी प्रकार से दक्षिणाभिमुख दस अंगुलियों को करता हूँ। **दश प्रतीचीः**=पश्चिमाभिमुख दस अंगुलियों को करता हूँ। **दश उदीचीः**=उत्तराभिमुख दस अंगुलियों को करता हूँ **दश ऊर्ध्वाः**=और ऊपर की ओर दस अंगुलियों को करता हूँ, अर्थात् इन ज्ञानप्रसारक

रुद्रों के लिए सब दिशाओं में नमस्कार करता हूँ। ४. **तेभ्यः नमः अस्तु**=इन रुद्रों के लिए अञ्जलिपूर्वक हमारा नमस्कार हो। 'दश वा अञ्जलेरंगुलयो, दिशि दिश्येवैभ्यः एतदञ्जलिं करोति'—श० ९।१।१।३९। **ते नः अवन्तु**=ये रुद्र ज्ञान देकर हमारी रक्षा करें। **ते नो मृडयन्तु**=इस ज्ञान-प्रदान द्वारा वे रुद्र हमारे जीवन को सुखी करें। ५. **ते**=वे रुद्र तथा हम सभी **यं द्विष्मः**=जिस ज्ञान में रुचि न रखनेवाले मूर्ख व्यक्ति को प्रीति के अयोग्य समझते हैं (द्विष अप्रीतौ) **यः च**=और जो **नः द्वेष्टि**=हम सबसे द्वेष करता है, अर्थात् सारे समाज का विरोध करता है और वस्तुतः उस विरोध के कारण ही द्वेष्य हो गया है, **तम्**=उसे **एषाम्**=इन रुद्रों के ही **जम्भे दध्मः**=दंष्ट्राकराल मुख में स्थापित करते हैं, (जम्भे=विडाल के मुख में मूषक के समान पीड़ा में—द०) इसे न्यायोचित दण्ड देने के लिए व इसकी मनोवृत्ति को सुधारने के लिए उन्हें सौंपते हैं।

भावार्थ—वे राज्याधिकारी, जो प्रजा के मस्तिष्क को उज्ज्वल बनाने के लिए, ज्ञानवर्षण के लिए नियुक्त हुए हैं, उन राज्याधिकारियों का हम आदर करते हैं।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—धृतिः। **स्वरः**—ऋषभः॥

ये अन्तरिक्षे येषां वात इषवः

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो येऽन्तरिक्षे येषां वातऽइषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥६५॥

१. **रुद्रेभ्यः नमः अस्तु**=रुद्रों के लिए, राजा की ओर से नियुक्त (रोरूयमाणो द्रवति) प्रभु का नाम लेकर वासनाओं पर आक्रमण करनेवाले पुरुषों के लिए नमस्कार हो। उन रुद्रों के लिए **ये**=जो **अन्तरिक्षे**=हृदयान्तरिक्ष को निर्मल बनाने के लिए नियुक्त हुए हैं, 'अन्तरा क्षि'=जो लोगों को सदा मध्यमार्ग में चलने का उपदेश देते हैं, जो 'अति' की हानियों का उद्घोषण करते हुए लोगों के जीवनों को नीरोग व सुखी बनाने का यत्न करते हैं। २. **वातः इषवः**=निरन्तर क्रियाशीलता ही **येषाम्**=जिनके बाण हैं। ये लोगों के जीवन को क्रियाशील बनाकर उन्हें सुखी बनाने में लगे हुए हैं। इनका मुख्य प्रचार यही है कि सदा क्रिया में लगे रहो, जिससे तुम्हारे हृदयों में अशुभ वासनाएँ उत्पन्न ही न हों। हृदय की पवित्रता का मार्ग एक ही है, और वह यह कि वायु की भाँति सदा अपने जीवन को गतिमय बनाये रक्खो। ३. **तेभ्यः**=इन क्रियाशीलतारूप बाणवाले रुद्रों के लिए मैं **दश**=दस अंगुलियों को **प्राचीः**=पूर्वाभिमुख करता हूँ। **दश दक्षिणाः**=दस अंगुलियों को दक्षिणाभिमुख करता हूँ। **दश प्रतीचीः**=दश अंगुलियों को पश्चिमाभिमुख करता हूँ। **दश उदीचीः**=दस अंगुलियों को उत्तराभिमुख करता हूँ। **दश ऊर्ध्वाः**=और दस अंगुलियों को ऊर्ध्वाभिमुख करता हूँ, अर्थात् सब दिशाओं में इनके लिए मैं नमस्कार करता हूँ। ४. **तेभ्यः नमः अस्तु**=इन रुद्रों के लिए हमारा नमस्कार हो। **ते नः अवन्तु**=वे रुद्र हमारी रक्षा करें। **ते नो मृडयन्तु**=क्रियाशीलता की प्रेरणा से हमारे जीवनों को पवित्र बनाकर ये उन्हें मङ्गलमय बनाएँ। मङ्गल भी तो उन्हीं का होता है जो सदा गतिशील हों (मगि गतौ)। ५. **ते**=वे रुद्र तथा हम सभी **यम्**=जिस अक्रियाशील, परन्तु खूब खानेवाले और अतएव राष्ट्र पर भारभूत व्यक्ति को **द्विष्मः**=प्रीति के अयोग्य समझते हैं, **यः च**=और जो **नः द्वेष्टि**=हम सबसे द्वेष करता है, **तम्**=उस अकर्मण्य बहुभुक् पुरुष को **ऐषाम्**=इन रुद्रों के **जम्भे**=न्याय के जबड़े

में **दध्मः**=स्थापित करते हैं। वे ही उचित दण्ड-व्यवस्था करके इनके जीवन को सुधारेंगे और इन्हें क्रियाशील बनाकर इनके हृदयों को निर्मल करेंगे।

भावार्थ—उन राजाधिकारियों को, जो प्रजा को वायु की भाँति निरन्तर क्रियाशीलता का उपदेश करके पवित्र-हृदय बनाने में लगे हैं, हम आदर देते हैं।

ऋषिः—परमेष्ठी प्रजापतिर्वा देवाः। **देवता**—रुद्राः। **छन्दः**—धृतिः। **स्वरः**—ऋषभः॥

ये पृथिव्याम् येषाम् अन्नमिषवः

नमोऽस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्यां येषामन्नमिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोऽवन्तु ते नो मृडयन्तु ते यं द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषां जम्भे दध्मः॥६६॥

१. **रुद्रेभ्यः नमः अस्तु**=उन राज्याधिकारियों के लिए हम नमस्कार करते हैं, **ये**=जो **पृथिव्याम्**=(पृथिवी शरीरम्) लोगों के शरीरों के विषयों में नियुक्त हुए हैं, जिनका कार्य यह है कि वे आहारादि का उचित ज्ञान देकर (रुत्+र) लोगों को शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग की शक्तियों के विस्तार के योग्य बनाएँ (प्रथ विस्तारे)। २. उन रुद्रों के लिए हम नमस्कार करते हैं **येषाम्**=जिनका **अन्नम् इषवः**=अन्न ही बाण है। वे सर्वत्र लोगों को यह स्पष्ट करने में लगे हैं कि यह अन्न शरीर-रक्षा के लिए खाया जाता है (अद्यते), परन्तु यही अन्न जब स्वादवश शरीर-रक्षा का ध्यान न करते हुए खाया जाता है तो यह हमारे शरीरों को ही खा जाता है, 'अत्ति च भूतानि'। इनका प्रचार यही होता है कि तुमने खाने के लिए जीवन को प्राप्त नहीं किया, जीवन धारण के लिए ही तुम्हें इस अन्न का ग्रहण करना है। तुम अन्न के लिए नहीं हो, अन्न तुम्हारे लिए है। ३. **तेभ्यः**=इन रुद्रों के लिए **दश प्राचीः**=दस पूर्वाभिमुख अंगुलियों को करता हूँ। **दश दक्षिणाः, दश प्रतीचीः, दश उदीचीः, दश ऊर्ध्वाः**=दस दक्षिणाभिमुख, दस पश्चिमाभिमुख, दस उत्तराभिमुख तथा दस ऊपर की ओर अंगुलियों को करता हूँ, अर्थात् इन्हें सब दिशाओं में बद्धाञ्जलि होकर प्रणाम करता हूँ। ४. **तेभ्यः नमः अस्तु**=इन रुद्रों के लिए नमस्कार हो। **ते नः अवन्तु**=ये अन्न के उचित प्रबन्ध व ज्ञान देने से हमें रोगों से बचाएँ। हमारे शरीरों को विस्तृत शक्तिवाला बनाएँ। **ते नः मृडयन्तु**=नीरोग बनाकर वे हमारे जीवनों को सुखी करें। ५. **ते**=वे रुद्र तथा हम **यं द्विष्मः**=अन्न के विषय में ठीक आचरण न करनेवाले पुरुष को अप्रीति के योग्य समझते हैं, **यः च**=और जो **नः द्वेष्टि**=हम सबको द्वेष्य समझता है **तम्**=उस अन्न का अतियोग करनेवाले व विकृत अन्न को व्यापार की वस्तु बनानेवाले पुरुष को हम **एषाम्**=इन अन्न के विषय में नियुक्त राजपुरुषों के **जम्भे दध्मः**=न्याय की दंष्ट्रा में स्थापित करते हैं। वे ही इसका सुधार करेंगे।

भावार्थ—उन राज्याधिकारियों का हम आदर करें जो अन्न के विषय में उचित व्यवस्थाएँ करते हुए हमारे शरीरों को स्वस्थ व विस्तृत शक्तिवाला बनाने का प्रयत्न करते हैं।

सूचना—इस रुद्राध्याय को 'अन्न के उचित सेवन' के उपदेश के साथ समाप्त किया गया है। इस अन्न-सेवन के विषय से सप्तदशाध्याय का प्रारम्भ करते हैं—

॥ इति षोडशोऽध्यायः सम्पूर्णः॥